श्री सीतारामाभ्यां नमः श्री हनुमते नमः
श्रीमते रामानन्दाय नमः श्री गुरुवे नमः

महर्षि वाल्मीकि शोध संस्थान
12448
अयोध्या
श्री मणिराम दास छावनी सेवा ट्रस्ट

अनुपम उपहार

शिवा-शिव सम्वाद

लेखक व प्रकाशक—

श्री वैष्णव स्वामी रामनारायणदास दर्शनाचार्य्य
रामनिष्ठ श्रीस्वामी शीतलदासजी का स्थान
अस्सीकाशी, वाराणसी (उ० प्र०)

प्रथमवार १०००] सम्बत् २०४० सन् १९८४ [मूल्य २)५०

भूमिका

भावुक सन्तमहानुभाव रसिक विद्वज्जन एवं जनता जनार्दन के सामने में अपने हृदय के उद्गार को प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मैं अपनी नईबात नहीं लिख रहा हूँ। प्रातः स्मरणीय भगवच्चरणारविन्द श्रीराम रसिक रसानुरागी कविकोकिल सम्राट् गोस्वामी तुलसीदासजी के अन्तःकरण भावों को ही प्रत्यक्ष करने का भरसक प्रयत्न कर रहा हूँ।

यह मेरे स्वप्न जगत् की कल्पना जो कि वेद एवं वेदान्त दर्शनोपरान्त मेरे हृदय में विकसित हुई। उसे अपनी वाणी द्वारा प्रगट करने में असमर्थ हूँ फिर भी भगवत् कृपा से भाषा लिपी में लिख रहा हूँ। इसको पढ़ने में भाषा सरल और स्थल-स्थल पर विशेष शब्दों को विशिष्ट रूप से व्याकरण और साहित्य के अनुरूप व्याख्या करके समझाने में भरसक प्रयत्न किया गया है।

सब रामायणियों के लिये तो सर्वस्व जीवन धन है। जो कि शिवाशिवसंबाद की व्याख्या आजतक चार छन्दों वाले इस प्रकार की विस्तृत टीका मिलना बहुत ही दुर्लभ है, जो कि सब महानुभावों को उपलब्ध (प्राप्त) हो सके।

पाठकगण, महानुभावों को इस प्रयास से यदि कहीं असावधानी से त्रुटि हुई हो तो बालक जानकर विज्ञव्यक्ति क्षमा करेंगे। सज्जन वृन्द महानुभावों से यही प्रार्थना है, कि—यदि इस मेरी लेखनी से कुछ सन्तुष्ट होकर अभिरुचि जागृत हुई हो तो मुझे आशीर्वाद देने की कृपा करेंगे। यही अन्तिम प्रार्थना है। इससे अधिक क्या लिखूँ ?

हरि ॐ तत्सद् इति शुभं भूयात्

आपका विनीत लेखक—
श्री वैष्णव स्वामी रामनारायणदास दर्शनाचार्य्यः
(श्रीस्वामी शीतलदासजी का स्थान) अस्सीकाशी वाराणसी (उ० प्र०)

प्राक्कथन

एक समय शान्त रस में भूतभावन कामरिपु कैलास पर्वत के शिखर पर बैठे थे। उस समय पराअम्बा पार्वती शान्तस्वभाव प्रसन्नचित् जानकर उनके पास पहुँची, उन्होंने यथा उचित उनको आसन दिया प्रसन्नता पूर्वक बैठी और पूर्व जन्म की कथा मन में स्मरण आ गई मृदुवानी से विहँसकर बोली—

.... बिहसि उमा बोली प्रिय बानी ?

कथा जो सकल लोक हितकारी। सोइ पूछन चह शैलकुमारी ॥
प्रभु जे मुनि परमारथवादी। कहहिं राम कहँ ब्रह्म अनादी ॥
तुम पुनि राम-राम दिनराती। सादर जपहु अनङ्ग आराती ॥
राम सो अवध नृपतिसुत सोई। की अज अगुन अलख गति कोई ॥
जो अनीह व्यापक विभु कोऊ। कहहु बुझाइ नाथ मोहि सोऊ ॥
कहहु पुनीत राम गुन गाथा। भुजगराज भूषन सुरनाथा ॥
प्रथम सो कारण कहहु बिचारी। निर्गुन ब्रंह्म सगुन बपुधारी ॥
पुनि प्रभु कहहु राम अवतारा। बाल चरित पुनि कहहु उदारा ॥
भगति ग्यान विग्यान विरागा। पुनि सब बरनहु सहित विभागा ॥
औरौ राम रहस्य अनेका। कहहु नाथ अति विमल विवेका ॥
जो प्रभु मैं पूछा नहिं होई। सोउ दयाल राखहु जनि गोई ॥
प्रश्न उमा कै सहज ×सुहाये। छल विहीन सुनि ×शिवमनभाये ॥

भगवान् विश्वनाथ ने गिरिजा के प्रश्नों को सुनकर पूर्व चरित्र का स्मरण करते हुए उमा के प्रश्न छल प्रपंच से रहित और स्वाभाविक है अतः उत्तर देने को तैयार हो गये। उन्होंने गिरिजा को सुनाने लगे—

गिरिजा सुनहु राम कै लीला। सुर हित दनुज विमोहन शीला ॥

× सुहाई, भाई यहाँ पाठ भेद है।

जेहि जाने जग जाइ हेराई । जागे यथा स्वप्न भ्रम जाई ॥
सगुनहि अगुनहि नहि कछु भेदा । गावहिं मुनि पुरान बुधवेदा ॥
अगुन अरूप अलख अज जोई । भगत प्रेमवश सगुन सो होई ॥
जो गुनरहित सगुन सोइ कैसे ? जल हिमउपल विलग नहिं जैसे ॥
राम सच्चिदानन्द दिनेशा । नहिं तहँ मोह निशा लवलेशा ॥
सहज प्रकाश रूप भगवाना । नहिं तहँ पुनि विग्यान विहाना ॥
हर्ष विसाद ग्यान अग्याना । जीव धर्म अहमिति अभिमाना ॥
राम ब्रह्म व्यापक जगजाना । परमानन्द परेश पुराना ॥
सबकर परम प्रकाश जोई । राम अनादि अवधपति सोई ॥
जगत प्रकाश्य प्रकाश रामू । मायाधीश ग्यान गुन धामू ॥

पुनः पार्वती ने प्रश्न किया ?

प्रथम जो मैं पूछा सोइ कहहू । जो मोपर प्रसन्न प्रभु अहहू ॥
राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी । सर्वरहित सब उरपुर वासी ॥
नाथ घरेउ नर तन केहि हेतु । मोहि समुझाइ कहहु वृषकेतु ॥

इस प्रकार प्रश्न पार्वती ने किया ? उत्तर—

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी । मत हमार अस ×सुनहु भवानी ॥

उमा को कैलासमें उमापति ने श्रीराम जन्मके अनेकों कारण बताये । जय और विजय के शाप की कथा, जालन्धर की कथा, नारदजीकी कथा, अन्त में स्वयंभू मनु और सतरूपा की कथा बताई । मनु और सतरूपा की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान् ने उनको बरदान दिया कि-अयोध्या के राजा रानी होइये "होइहहु अवधभुवाल तबमैं होब तुम्हार सुत" तब मैं आपका पुत्र बनूँगा ऐसा मनुजी को बरदान देकर अन्तरध्यान हो गये ।

×सुनहि, सयानी, यहाँ पाठभेद है ।

श्री मनुमहाराज की कथा

पूर्व काल में मनुमहाराज नैम्यषारण्य तीर्थ में तप कर रहे थे। उनके हृदय में व्यापक ब्रह्म को पुत्र रूप दर्शन करने की बड़ी अभिलाषा थी, कि मैं अपने नेत्रों से प्रभु का साक्षात् दर्शन करूँ। कौन सा स्वरूप का दर्शन करूँ?

उर अभिलाष निरन्तर होई। देखिअ नयन परम प्रभु सोई॥
अगुन अखण्ड अनन्त अनादी। जेहि चिन्तहिं परमारथवादी॥
नेति नेति जेहि वेद निरूपा। निजानन्द निरुपाधि अनूपा॥
शम्भु विरंचि विष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अंश ते नाना॥
ऐसेउ प्रभु सेवक वश अहई। भगत हेतु लीला तनु गहई॥
जौ यह बचन सत्य श्रुति भाषा। तौ हमार पूजहिं अभिलाषा॥
विधि हरिहर तप देखि अपारा। मनु समीप आए बहु बारा॥
प्रभु सर्वग्य दास निज जानी। गति अनन्य तापस नृप रानी॥
माँगु-माँगु वरु भै नभ बानी। परम गम्भीर कृपामृत सानी॥
जौ अनाथ हित हम पर नेहू। तौ प्रसन्न होइ यह वर देहू॥
जो स्वरूप वस शिव मनमाहीं। जेहि कारन मुनि यतन कराहीं॥
जो भुशुण्डि मनमानस हंसा। सगुन अगुन जेहि निगम प्रशंसा॥
देखहिं हम सो स्वरूप भरिलोचन। कृपा करहु प्रणतारति मोचन॥
भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। विश्ववास प्रगटे भगवाना॥
नील सरोरुह नीलमनि नील नीर धर श्याम।
लाजहिं तन शोभा निरखि कोटि-कोटि शतकाम॥ बा०दो० १४६।
वाम भाग शोभित अनुकूला। आदिशक्ति छबि निधि जगमूला॥
भृकुटि विलास जासु जगहोई। राम वाम दिशि सीता सोई॥
छवि समुद्र हरिरूप विलोकी। एकटक रहे नयन पट रोकी॥
चितवहिं सादर रूप अनूपा। तृप्ति न मानहिं मनु सतरूपा॥
दानि शिरोमनि कृपानिधि नाथ कहउँ सतिभाव।
चाहउँ तुमहि समान सुत प्रभु सन कौन दुराव॥ बा०दो० १४९।

देखि प्रीति सुनि वचन अमोले । एवमस्तु करुणा निधि बोले ॥
आपु सरिस खोजौं कहँ जाई । नृप तव तनय होब मैं आई ॥
इच्छा मय नर वेष सँवारे । होइ हौं प्रगट निकेत तुम्हारे ॥
अंशन सहित देहधरि ताता । करिउँ चरित भगत सुख दाता ॥
आदिशक्ति जेहि जग उपजाया । सोउ अवतरिहि मोरि यह माया ॥
पुरउब मैं अभिलाष तुम्हारा । सत्य-सत्य प्रण सत्य हमारा ॥
पुनि-पुनि अस कहि कृपा निधाना । अन्तर्धान भए भगवाना ॥

श्री मनुमहाराज की कथा समाप्त

साधारण जनता यह शङ्का करती है कि—जैसे-हमलोग माँ बाप के रजविन्दू के संयोग से उत्पन्न हुए हैं, वैसे ही रामजी भी कौसल्या के गर्भ से उत्पन्न हुए हैं, ऐसा मानते हैं। किन्तु उनकी उत्पत्ति ऐसी नहीं होती, क्योंकि हमलोग बद्धजीव हैं और पराधीन हैं वे तो "कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुम्" समर्थ हैं, षड्गुण ऐश्वर्ययुक्त है उनकी सम्पूर्ण लीलाएँ दिव्य हैं।

वे एकाङ्गी नहीं हुए "श्रीवत्स" लक्ष्मीयुक्त हुए अर्थात्—अपनी संवित्शक्ति सन्धिनीशक्ति अह्लादिनीशक्ति सहित हुए। "शक्तिः शक्तिमतोरभेदः" इस न्याय से शक्ति और शक्तिमान् ये दोनों अभेद और अनादि हैं। महाविष्णु ही राम कहाते हैं। विष्णु और लक्ष्मी दोनों मिश्रित स्वरूप होने से ही चतुर्भुज कहलाते हैं "सूक्ष्मंचैवचतुर्भुजम्" यह नारद पंचरात्र ग्रन्थ में है। महा कविसम्राट् गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी 'भुजचारी' पद रामचरितमानस में दिये हैं। शुक्लयजुर्वेद अ० ३१वें, मं० ११वाँ पुरुषसूक्त में भी "बाहूराजन्यः" यहाँ 'बाहू' शब्द द्विवचन है सो केवल महाविष्णु के लिये आया है। अतः अङ्गाङ्गीभाव होने से संयुक्त शक्ति सहित चतुर्भुज रूप होंगे अन्यथा चतुर्भुजरूप सिद्ध नहीं होगा।

व्यापकोऽपि हि नित्यश्च सर्वस्मिश्चराचरेषु ।
विष्लृ व्यापकाद्धातोश्च विष्णुरित्यभिधीयते ॥

वेवेष्टि व्याप्नोतीति विष्णुः । महाविष्णु को ही राम कहते हैं, अव्युत्पन्न राम अनादि है, शंकरजी ने पार्वती से कहा—

रामब्रह्म व्यापक जगजाना । परमानन्द परेश पुराना ॥
सबकर परम प्रकाशक जोई । राम अनादि अवधपति सोई ॥

सर्वं वसन्ति वै यस्मिन्सर्वस्मिन् वसतोऽपि वा ।
तमाहुर्वासुदेवं च योगिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

विश्व में निवास होने से तत्त्वदर्शी योगिजन उसे वासुदेव कहते हैं।

यो विराजस्तनुर्नित्यं विश्वरूपमथोच्यते ॥

विराट् स्वरूप को विश्व कहते हैं ।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥

इस मन्त्र में ब्रह्म, जगत् और जीव इन तीनों के स्वरूप का प्रतिपादन किया गया है । ब्रह्माण्ड में जो कुछ चिदचिदात्मक जड और चेतन अर्थात्—जितने प्रत्यक्ष और अनुमान (अप्रत्यक्ष) से जानने योग्य पदार्थ हैं वे सब पदार्थ ईशा-ईश्वर से आच्छादित है वह स्वरूप से व्याप्त है, ज्ञान से व्याप्त है और शरीर से व्याप्त है । यहाँ 'ईशावास्यम्' पद से ब्रह्माण्ड का व्यापकता पूर्वक अस्तित्व का प्रतिपादन किया गया है । इदं सर्वम्' इत्यादि से जगत् और जगत् के कारण का प्रतिपादन किया गया है । भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद् धनम् पद से जीव का प्रतिपादन किया गया है ।

रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि ।
इति राम पदेनासौ परब्रह्माऽभिधीयते ॥
रमते सर्वभूतेषु स्थावरेषु चराचरे ।
अन्तरात्मा स्वरूपेण तेन रामेति भण्यते ॥
रमतेऽन्तर्यामित्वेन सर्वभूतेष्वपि रामः ।
रमन्ते योगिनो यस्मिन्निति रामः ॥

नित्यानन्द चिदात्मा में योगी लोगजिसमें रमण करते हैं, उस

परब्रह्म परमात्मा को राम कहते हैं। समस्त चराचर में अन्तर्यामी रूप में रमण करने से उसको राम कहते हैं।

यहाँ जितने शब्द राम के हैं वे सब अनादि, ऐश्वर्यपरक है और अव्युत्पन्न 'राम' है।

हरि दुःख कोहरण करने वाला जन्ममरण को छुड़ाने वाला हरिः ॐ तत्सद् वहं ब्रह्मसत् है। अब रक्षणे धातु से ॐ बनता है अवति रक्षतीति ॐ प्रकर्षेण नूयते स्तूयते इति प्रणवः नु स्तुतौ धातु से प्रणव बनता है।

बृहं बृद्धौ धातुसे ब्रह्म शब्द बनता है, विष्लृ व्याप्तौ धातु से विष्णुः शब्द बनता है। भृञ भरणे धातु से या डुभृञ् धारण पोषणयोः धातु से भरत शब्द बनता है।

विश्व भरण पोषण कर जोई। ताकरनाम भरतअस होई॥

उपर्युक्त शब्द व्युत्पन्न हैं।

"शब्दो द्विधा अव्युत्पन्नो व्यूत्पन्नश्च" व्याकरण में शब्द दो प्रकार के होते हैं—अव्युत्पन्न और वुत्पन्न। जो शब्द अनादि है किसी धातु प्रत्यय और प्रत्ययान्त से रहित बनते हैं उसको अव्युत्पन्न कहते हैं और जो शब्द धातु प्रत्यय और प्रत्ययन्त द्वारा बनते हैं उनको व्युत्पन्न कहते हैं। जहाँ राम को अनादि मानेंगे वहाँ ऐश्वर्यपरक अर्थ होगा और जहाँ राम को क्रीडार्थ मानेंगे वहाँ माधुर्यवाचक अर्थ होगा।

अब आइये—मूलप्रकृति, श्रीः महालक्ष्मीः, और सीता इत्यादि शब्दों पर थोड़ासा विचार कर लेवें।

मूलप्रकृतिरूपत्वात् सा सीताप्रकृतिः स्मृता
प्रणवप्रकृतिरूपत्वात् सा सीताप्रकृतिरूच्चते॥ (सीतोपनिषद्)

मूलप्रकृति रूप होने से ही सीताजी को प्रकृति कहा गया है। तथा भगवती सीता जी स्वयं ही प्रणव रूपिणी प्रकृति है अर्थात् प्रणव—अक्षर रूपा महत्सत्ता है। यह प्रकृति तत्त्व उभय विधि हैं नित्य विभूति और लीला विभूतियाँ ये दोनों अनादि हैं।

सत्त्व, रजस् और तमस् की साम्यावस्था को मूल प्रकृति कही जाती है। यह चेतन रूपा है और सत्त्व, रजस्, तमस् की विषमावस्था को चेतन रहित प्रकृति कही जाती है। यह कार्य रूपा है।
"मूल प्रकृतिरविकृतिमहदादयः प्रकृति विकृतयः सप्त" (सांख्यकारिका-३)

मूल प्रकृति विकृति रहित है किन्तु महदादि सप्त विकारों को (महत्तत्त्व, अहङ्कार और पञ्चतन्मात्राएँ) उत्पन्न करने वाली है सांख्य-मत में प्रकृति त्रिगुणात्मिकता तथा चेतन रहित है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहङ्कार ये आठ प्रकार की प्रकृति कही गई है (गीता ७-४) किन्तु महाविष्णु की शक्ति का नाम श्रीः और महा लक्ष्मी है। ये दोनों नित्य चेतनरूपा हैं "श्रीश्च ते लक्ष्मश्च पत्न्यौ" श्रीः और लक्ष्मी ये दोनों आपकी पत्नियाँ हैं।

श्रयन्तीं श्रियमाणाञ्च शृणातीं शृण्वतीमपि।
शृणाति निखिलान्दोषान् शृणाति च गुणैर्जगत्॥
श्रीयते चाखिलै नित्यं श्रयते च परं पदम्।
श्री शब्दस्य हि भावर्थः सूरिभिरनुभीयते॥

लक्षपति पश्यतीति लक्ष्मीः शब्द = राजलक्ष्मी और विभूति (ऐश्वर्य) परक है। वस्तुतः श्रीः और लक्ष्मी ये दोनों शक्तियाँ एक है किन्तु कार्य भेद है।

१- शृ विस्तारे धातु से—शृणगंढ दिव्यगुणैः शरणागतानां चेतनानां च भक्त्यादि विस्तारयतीति श्रीः।

२- शृ हिंसायां धातु से—शृणाति शरणागत चेतनकृतजन्म जन्मान्तरीय महापातक रूप दोषान् हिनस्ति नाशयतीति श्रीः।

३- श्रु श्रवणे धातु से—चेतन कृत् किञ्चिदपि प्रार्थना रूप विज्ञापनं भगवन्तं रामं श्रावयति अथवा—स्वयं वात्सल्य सौशिल्य दिव्यगुण जलनिधित्वात् शृणोतीति श्रीः।

४- श्रिञ् सेवायां धातु से—श्रीयते चाखिलैर्नित्यम् श्रीयते ब्रह्मेन्द्र रुद्रादि मुनिवरगणैश्च चराचर चेतनैश्च श्रीयते सेव्यते, इति श्रीः।

जो ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, मुनिवर श्रेष्ठ और चराचर संपूर्ण जगत् से सेवित हैं वे श्रीः जी हैं अथवा—चेतनकृत शरणागतों की थोड़ी सी भी प्रार्थना हो उसको विस्तार पूर्वक भगवान् राम को सुनाती हैं अथवा वात्सल्य सौशिल्यादि दिव्यगुणों की समुद्र श्रीः जी स्वयं सुनती हैं। श्रयन्त्येतामिति श्रीः ॥ श्रीयते, श्रयते, शृणोति, श्रावयति, शृणाति, इत्यादि धातुओं से श्रीः शब्द की व्युत्पत्तियाँ होती हैं। 'श्रीः' जी तो श्री भू नीला देवियों के साथ नित्य रहती हैं।

इच्छा ज्ञान क्रिया शक्तिस्त्रयं यद् भाव साधनम्।

तद् ब्रह्म सत्ता सामान्यं सीता तत्त्वमुपास्महे ॥

सीता शब्द का अर्थ- सत्यरूपा, महत्तेजोमया, ब्रह्मात्मिका पराशक्ति है। इनके तीन रूप हैं—

१- शब्द ब्रह्ममयी (साक्षाद् ब्रह्म रामरूपा)=परात्पर ब्रह्म रामरूपा।

२- बुद्धि स्वरूपा = ज्ञान स्वरूपा। ३- अव्यक्तरूपा पराशक्ति हैं।

अथवा—"सीतासीराग्रतो जाता" हलाग्रभाग जायमान होने से सीता कहते हैं या—कृषि की अधिष्ठात्री देवी सीता महाराज सीरध्वज (राजा जनक) जी हल जोतते हुए उनको दर्शन दी। यह सीतादेवी अयोनिजा हैं।

सिध् गत्यां धातु से, या-सिधु शास्त्रमंगल्ये धातु से सीता बनता है। इसका अर्थ-गति, गमन, ज्ञान, प्राप्ति और मोक्ष। सेधन्ति मोक्ष पदं प्राप्नुवन्ति जनां यया सा सीता, या-सेधन्ति भगवत्साक्षात्कार ज्ञानं प्राप्नुवन्ति जना यया सा सीता। भावुक भक्तजन जिनके द्वारा मोक्ष पद प्राप्त होते हैं, वह सीता जी हैं। या-भगवान् का साक्षात्कार प्रत्यक्ष दर्शन जिनकी कृपा से होती है, वह सीता जी हैं, या-सब मंगल कल्याण को करने वाली सीता जी हैं। या-षिध् संराद्धौ धातु से-सिध्यति सम्यक् प्रकारेण मोक्ष पदमाराद्धान्तं सिध्यतीति सीता। सब प्रकार से मोक्ष पद वाचक सिद्धान्त को प्रदान कर भवत्यात्यादि को निष्पन्न करती हैं, वह सीता जी हैं। षूञ् प्राणि प्रसवे धातु से-सूयते

चराचरं विश्वम् = सीता जी से चराचर जगत् उत्पन्न हुआ है ।

षु प्रसवैश्वर्योर्धातु से-जगत्की उत्पत्ति का पालन पोषण संरक्षण कर्त्रीत्व का बोध होता है, एवं षडैश्वर्य युक्त भगवती सीता का ज्ञान होता है ।

षिञ् बन्धने धातु से-सिनाति, सिनोति = भव बन्धन से मुक्त कर देती है । महाशक्ति का नाम सीता है अथवा सिनाति वंश करोति स्वचेष्टया भगवन्तं या सा सीता । षोऽन्त कर्मणि धातु से-स्यति सर्वेषां ब्रह्माण्डानामन्तंकरोतीति सीता = महा प्रलयान्त में संपूर्ण ब्रह्माण्डों के नाश करने वाली, या-समस्त दुष्ट, दानव, दैत्य, राक्षसों को नाश करने बाली, ऋषि, मुनि, गौ, ब्राह्मण, सन्तों को निर्भय करने वाली है । उपर्युक्त धातुओं से सीता शब्द की व्युत्पति होती है ।

चेतन श्री लक्ष्मी जी महा प्रलय काल में विश्राम करने के लिये महा विष्णु के दाहिनी तरफ वक्षः स्थल पर (श्रीवत्स) की आकृति को धारणकर विश्राम करती है, वही श्री सीता जी के रुप में भगवान् राम जी के संकल्पानुसार समस्त लोकों की रक्षणार्थ कल्याण के रूप में प्रगट होती हैं ।

इसी प्रकार द्वापर में राधाकृष्ण का स्वरूप भी विष्णु परक है । राधा = आराधना स्वरुप, या-आराधना की सिद्धि जिसकी कृपा से होती है, उसको राधा कहते हैं । कृष्ण = कृषिर्भू वाचक, णश्च निवृत्ति वाचक है । अथवा-कृष = सत्ता, आकर्षण, ण का अर्थ आनन्द अर्थात्-आनन्द का आकर्षण मूर्तिमान् कृष्ण का अर्थ हुआ ।

अब आकाश बाणी के शब्दों पर विचार कीजिये-"शब्द गुण कत्वमाकाशस्य लक्षणम्" यह नैयायिकों के सिद्धान्त है । "शब्दोनित्यः' यह वैयाकरणों के सिद्धान्त है । समवाय सम्बन्ध से शब्द आकाश में नित्य रहता है (घटाकाश, मठाकाश, से महाकाश में शब्द नित्य विद्यामान रहता है) । "आकाशो नित्यत्वेसति शब्दो नित्यः" अतः आकाश नित्य होने से शब्द भी नित्य है । "गगन ब्रह्म वाणी सुनि काना"

ब्रह्म की वाणी आकाश के द्वारा सब देवताओं ने सुनी ।

'भये प्रगट' इस छन्द में भव की प्रधानता है । परब्रह्म के प्रगट होने से पूर्व इन्द्रादि सब देवतागण रावण के कारागार (जेलखाने) में बन्द पड़े थे । "आयसु करहिं सकल भय भीता" रावण के डर से सब आज्ञा मांगते थे और उसके भय से कोई भी प्रार्थना कैसे करें ? तब प्रभु की योगमाया के द्वारा सब मन से चिन्तन रुप प्रार्थना किये ।

एक समय सब देवतागण विचार किये कि प्रभु सर्वत्र व्यापक है--"हरि व्यापक सर्वत्र समाना । प्रेम ते प्रगट होहिं मैं जाना" सब देवों ने प्रेम से उस प्रभु (अव्यक्त ब्रह्म) की बिनती की । प्रार्थना करने पर आकाशवाणी हुई--"गगन ब्रह्मबाणी सुनि काना" अतः सब देवों ने अपने अपने कानों से ब्रह्म की बाणी सुनी ।

सूचना--आजकल (इस समय) भी आधुनिक यन्त्र वायरलेस, रेडियो द्वारा सब लोग शब्द को सुनते हैं और टेलीबीजन के द्वारा आँखों से प्रत्यक्ष देखते भी हैं ।

जनि डरपहु मुनि सिद्धि सुरेशा । तुमहि लागि धरि हौं नरवेशा ॥
अंशन सहित मनुज अवतारा । लै हौं दिनकर बंश उदारा ॥
आदि शक्ति जेहि जग उपजाया । सोइ अवतरिहिं मोरि यह माया ॥
कश्यप अदिति तहाँ तप कीन्हा । तिन्ह कहँ मैं पूरब वर दीन्हा ॥
हरि हौं सकल भूमि गरुआई । निर्भय होहु देव समुदाई ॥

इस प्रकार सब देबताओं ने आकाश वाणी द्वारा ब्रह्म की वाणी (शब्द) को सुना । तब सबको धैर्य हुआ । अतः यहाँ भय की प्रधानता है ।

जा दिन ते हरि गर्भहिं आये=जिस दिन से दुःखों को हरण करने वाले हरि कौसल्या के अन्तःकरण में विचरने लगे । सकल लोक सुख सम्पत्ति छाये=उस दिन से सब लोगों को सुख और सम्पत्ति अपार हो गया अर्थात् सुख सम्पत्ति इतना अधिक हो गया कि समाया नहीं समाया

शिवा-शिव सम्वाद के

लेखक व संपादक--

योगिराज विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त छन्दानुवर्ती

वेद एवं वेदान्तनिष्णात श्री वैष्णव स्वामी

राम नारायण दास दर्शनाचार्य्य का जन्म

चैत्र शुदी पंचमी, बिक्रमी सम्बत् १९४६

कृपापात्र, रामनिष्ठ श्रीस्वामी जनार्दन दासजी महाराज

श्री रामनिष्ठ शीतल दास जी का स्थान अस्सी, काशी, वाराणसी में

... ओं में भये

था (छाये - भरपूर रहा) । यहाँ हरि का अर्थ दुःखों को हरण करने वाला है अर्थात्—सबको जन्म मरण के दुःखों को छुड़ाने वाला है । गर्भ शब्द का अर्थ अन्तःकरण है । और यदि विशिष्ट रूप से देखना हो तो "मम उर सो वासी" को जहाँ अर्थ है वहाँ देखिये ।

हिमाचल प्रदेश, जि० सोलन मण्डलान्तर्गत, पो० गढ़खल, साकेतधाम निवासी, मेरे परम प्रिय शिष्य श्रीमान् ब्रह्मर्षि प्रेमाच्युतजी ने अपनी लेखनी द्वारा 'श्री प्रेमपूजा' नाम की पुस्तक में मेरा नामाङ्कित कर अपने सेवकों में प्रचार-प्रसार कर मेरे गौरव को बढ़ाया है । इसके लिये मैं उनका बहुत आभारी हूं । गोरखपुर निवासी, परममाननीय श्रीमान् पं० डा० बद्री प्रसादजी 'जोशी' महोदय ने अपनी विचारधारा प्रगट कर जो कुछ दो चार शब्द शिव शिव संबाद में दिया है । इसके लिये उनका भी बहुत आभारी हूं ।

इस शिवाशिव संवाद की व्याख्य कर्ता योगिराज विशिष्टाद्वैत छन्दानुवर्ती, वेद एवं वेदान्त निष्णात, श्रीरामनिष्ठ स्वामी जनार्दन-दासजी के कृपा पात्र विनीत श्री वैष्णव स्वामी रामनारायण दास दर्शनाचार्य्य । श्रीरामनिष्ठ स्वामी शीतलदासजी का स्थान—अस्सी, काशी, वाराणसी—५ (उ० प्र०) ।

आधुनिक निवास स्थान—श्री सद्गुरु सदन, पापमोचन (गोलाघाट) घाट । पोस्ट—अयोध्या जिला—फैजाबाद ।

शिवाशिव संवाद की व्याख्याकर्ता,

योगिराज विशिष्टाद्वैत छन्दनुवर्ती, वेद एवं वेदान्तनिष्णात श्रीवैष्णव स्वामी रामनारायण दास दर्शनाचार्य्य, का जन्म-चैत्र शुदि पंचमी, विक्रमी-संवत् १९४६ सन् १८८९ ईशवीय, मार्च मास, वाराणसी में हुआ था । कृति—(पिता का नाम—श्री गोकुलदास था) जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य (उपनाम—शिवरामाचार्य्य) की जन्म भूमि, उत्तर प्रदेश, (कोटपि[illegible] २७१८८१) जिला—बहराइच, पोस्ट—प्रह्लादगांव, ग्राम—परसे[illegible] में श्री रामनारायण वैष्णव संस्कृत विद्यालय इस [illegible] की [illegible]ों में भये

प्रे[illegible] के [illegible]

प्राप्त उत्तर मध्यमा तक है स्थापित सन् १९७२ ई० ।
उत्तरीय विहार, जिला-दरभंगा, लोहना स्टेशन के पास ग्राम + पोस्ट-लगमा रामभद्रपुर में सन् १९६६ में ब्रह्मचर्य आश्रम श्री रामनारायण संस्कृत विद्यालय खोला था । श्री अवध धाम, पं० अखिलेश्वरदासजी तथा श्री रामचरण दास जी 'गिरनारी बाबा' संस्कृत विद्यालय में सन् १९६१ ई० में निःशुल्क अध्यापन कार्य किया था ।

निम्नलिखित पुस्तकों के विशिष्ट रचयिता—
पञ्च सूक्तम् (वेद विषय) सिद्धान्त दीपिका संस्कृत भाष्य व्याख्या हिन्दी युक्त । ब्रह्म गायत्री मंत्र का मौलिक सिद्धान्त श्रीराम तत्त्व गोत्रावलि युक्त । अष्टाङ्ग योग उपासना रहस्यम् । वेदान्त परिचय ग्रन्थ ये दो भागों में छपे हैं । "व्याकरण तत्त्व प्रकाश" संस्कृत हिन्दी इङ्गलिश सहित ४०० सौ पृष्ठों में । 'काव्य चन्द्रकला" इसमें अभिधा लक्षणा, व्यंजना, नौरस, अलकार और छन्द भी है । छन्दोविज्ञानम् । गीता महात्म्यम् और श्री सीतारामोपासना पूजन पद्धति । श्री रामनाम महिमा और श्री सीतारहस्यम् । श्री मंत्रराज परम्परा । सर्वसार संग्रह । आपके हाथ में आपकी किस्मत इत्यादि पुस्तकों के विशिष्ट लेखक— श्री वैष्णव स्वामी रामनारायणदास दर्शनाचार्य, (श्री शीतलदासजी का स्थान) अस्सी, काशी, बाराणसी ।

—०×०—

॥ श्रीगणेश आरती ॥

गाइये गनपति जगबंदन । संकर-सुवन भवानी-नंदन ॥ १ ॥
[illegible] सिद्धि-सदन, गज-बदन, बिनायक । कृपा-सिंधु, सुंदर, सब-लायक ॥ २ ॥
[illegible] मुद-मंगल दाता । बिद्या-बारिधि, बुद्धि-बिधाता ॥ ३ ॥
[illegible]लसिदास [illegible] बसहिं रामसिय मानस मोरे ॥ ४ ॥

शिवा शिव सम्बाद

रचि महेश निज मानस राषा । पाइ सुसमय शिवासन भाषा ॥

श्रीराम चरित मानस के अन्तर्गत शिव और पार्वती के सम्बाद में भगवान् श्रीरामजी के जन्म से पूर्व जब प्रभु माता कौसल्या के समक्ष विराट् स्वरूप चतुर्भुज रूप में दर्शन देते हैं । तब कौसल्याजी प्रभु की स्तुति करती हैं । उसी स्तुति को वैज्ञानिक रीति से व्याख्या की जाती है । जग निवास प्रभु प्रगटे अखिलोक विश्राम (दोहा १९१)

भये प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी,
हर्षित महतारी मुनिमन हारी अद्भुत रूप निहारी ॥
लोचन अभिरामा तनु घनश्यामा निज आयुध भुजचारी,
भूषन बनमाला नयन विशाला शोभा सिन्धु खरारी ॥ (छन्द १)

जिस समय भय, आतङ्क निरंकुशता अशान्ति का साम्राज्य (वातावरण) चारो तरफ छा गया था । मानव की आसुरी क्रिया से मानवता के प्रतिकूल हो गई थी । सब देवता गण भी भयभीत हो उठे थे । उस भय को छुड़ाने के लिये और कौसल्या के जन्ममरण को छुड़ाने के लिये अप्रगट ब्रह्म प्रभु अपनी योगमाया से प्रगट भये (मूर्तमान् हुए) ॥

सूचना—(भये) प्रगट पाठ भेद दिया गया है क्योंकि-भूतपूर्व अयोध्यवासी सन्त शिरोमणि श्रीकरुणा सिन्धु जी महाराज श्री पं० रामचरण दासजी, श्री पं० रामबल्लभा शरणजी, श्रीकान्त शरणजी विद्यावारिधि श्री पं० ज्वाला प्रसाद मिश्रजी, श्री पं० रामेश्वर प्रसाद-भट्टजी, श्री कोदोरामजी, श्री पं० सूर्यदीन शुक्लजी, श्री पं० हरिप्रसाद भगीरथ गौड़जी इत्यादि महानुभावों ने श्रीरामचरित मानस में 'भये प्रगट' पाठ दिये हैं जिन महानुभावों की शंका हो तो देख लेवें ।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध प्राचीन प्रेसों के छपे हुए प्रतियों में भये

पाठ है जैसे—श्री लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई, निर्णयसागर प्रस बम्बई, मुन्सी नवल किशोर प्रेस लखनऊ इत्यादि में छपे हैं और गीताप्रेस गोरखपुर के छपे हुए प्रतियों में (भए) पाठ दिये हैं। यहाँ निहारी के स्थान पर विचारी पाठभेद है।

'भये प्रगट' इस छन्द में भये पाठ आदर सूचक और बहुबचन है, किन्तु एक बचन में 'भय' शब्द बनता है। 'भये' यहाँ श्लेषालंकार है। अतः भये का अर्थ दो प्रकार है। संज्ञा वाचक में भये का अर्थ डर और क्रिया वाचक में भये का अर्थ हुए ऐसा अर्थ होता है। डर और हुए इन दोनों प्रकार के अर्थों में भये पाठ रखने से ही अर्थ निकलता है 'भए' पाठ से केवल क्रिया का वाचक अर्थ होता है। "हरि हौं धरि हौं" ऐसा पाठ प्राचीन प्रतियों में छपे हुए हैं और गीता प्रेस में "हरिहउँ, धरिहउँ" पाठ भेद है जिस समय सब देवतागण भयभीत थे उस समय उन सबों के भय को छुड़ाने के लिये ही अप्रगट ब्रह्म प्रगट भये। इस प्रकार अर्थ करने से भय का, दो अर्थ निकलता है, अन्यथा नहीं। सूचना समाप्त।

जग निवास प्रभु प्रगटे अखिल लोक विश्राम। (दो० १९१)

एक समय कैलास में बैठी हुई जगदम्बा माता पार्वती देवी ने भगवान् शिवजी से ब्रह्म राम के विषय में प्रश्न किया? हे प्राणबल्लभजू! राम ब्रह्म व्यापक जगजाना। परमानन्द परेश पुराना॥

जो ब्रह्म सर्वत्र व्यापक = अप्रगट है, वह ब्रह्म कौसल्या के सामने कैसे-प्रगट हुए? यह कौतुहल विषय मुझे समझाइये।

शंकर जी ने कहा कि सावधान होकर सुनिये। जो ब्रह्म सर्वत्र व्यापक है वही पर ब्रह्म भक्ति के वशीभूत होकर मूर्तमान हुए। क्योंकि वह ब्रह्म अपनी सत्ता में तो सर्वतंत्र स्वतंत्र है, परन्तु भक्ति के वश होकर परतंत्र हो जाता है। भक्ति स्वरूपा कौशल्याजी के पुकारने पर वही परब्रह्म प्रगट हुए।

श्री पार्वती ने पुनः पूछा? हे प्राणवल्लभ जू! कौन शरीर से

प्रगट् हुये ? उत्तर—कृपया पाल्यते, इतिकृपाला, अर्थात् कृमि, स्थावर, जंगम से लेकर ब्रह्मा पर्यन्त तक सबको पालन पोषण करने वाले विष्णु के रूप में प्रगट हुए, न कि सृष्टि कर्ता ब्रह्मा के रूप और संहार कर्ता रुद्र के रूप से अतः कृपाला पद दिया गया है।

दीन=सृष्टि कर्ता ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की, किन्तु सबको ६ व्याधियों से युक्त बनाया। "भूख प्यास, सुख दुःख (हर्ष-शोक) और जन्म मरण" ये ही ६ प्रकार की व्याधियाँ हैं। इन्हीं को वेदान्त की परिभाषा में ६ प्रकार की उर्मियाँ भी कहते हैं। इसलिये जड़चेतन सबको ब्रह्मा ने दीन बनाया। इसी दीनता को छुड़ाने के लिये भक्ति स्वरूपा कौसल्या के पुकारने पर ही भव रोग छुड़ाने के लिये प्रगट हुए। अतः जो दीनता से पुकारता है, उसकी दीनता को छड़ाने के लिये प्रगट होते हैं। दयाला=सब पर दया करने के लिये ही विष्णु ने शरीर धारण किया।

हे पार्वतीजू! सुनिये, अहैतुकी कृपा करने लिये ही नित्य साकेत विहारी श्री रघुनाथ जी प्रगट हुए।

विप्र धेनु सुर सन्त हित लीन्ह मनुज अवतार।

कौसल्या हितकारी=कैलास में बैठी हुई पराम्बा अन्नपूर्णा माता उमा देवी ने अपने प्रियतम भूतभावन कैलासपतिजी से प्रश्न किया? हे प्राणवल्भजू!

परात्पर ब्रह्मराम साकेत बिहारी कौसल्या के हितकारी कैसे हुए? मेरे ऊपर कृपा करके यह गुप्त रहस्य प्रगट कीजिये। अच्छा सावधान होकर सुनिये।

पूर्वदत्त वरदान को पूर्ण करने के लिये ही ब्रह्मराम विष्णु के रूप में प्रगट् हुए। कौसल्या जी अपने महल के अन्दर मध्याह्न काल, ध्यान में मग्न थीं। उसी समय उनके सामने प्रगट् हुए, ध्यान में नेत्र बन्द रहते हैं। विष्णु भगवान् कौसल्या माँ के मुख को देख रहे हैं, तब उसी समय अपने हाथ का कमल पुष्प भक्ति माता के चरण पर

चढ़ाकर मातृ पूजन किये, फिर माथे को देखने लगे। ललाट पर ब्रह्माङ्कित चिह्न को देखकर पढ़ने लगे—"मंत्र महा मणि विषय व्यालके" यह काल का ग्रास बारम्बार जन्म मरण कौसल्या के माथे पर लिखा है। यही विषय व्याल (सर्प) है।

विष्णु भगवान् ने विचार किया कि—काल का विभाग महेश जी के पास है। इसको छुड़ाने के लिये वायरलेस किया शंख ध्वनि वह आकाशवाणी के द्वारा कैलास में पहुंची। उस शंख का तुमल (भयंकर) शब्द के साथ-साथ कैलास डगमगा गया, उसी समय शंकर भगवान् की समाधि खुल गई। शंकर जो उस आवाज को पकड़ लिये अर्थात् समझ गये कि—यह शंख ध्वनि विष्णु भगवान् का है, समाधि टूटने पर फिर ध्यान से देखा कि, विष्णु जी अयोध्या में महल के अन्दर कौसल्या के सामने खड़े हैं। यह आकाशवाणी वहीं से आ रही है। श्री विष्णु जी यह कह रहे हैं कि—ब्रह्मा ने कौसल्या के माथे पर जन्म मरण लिख दिया है। अतः इसको काल से परे करने को कह रहे। इस प्रकार शंकर जी ने आकाशवाणी द्वारा शब्द को सुनकर तुरन्त ही कौसल्या के माथे पर से कुअङ्क मिटा दिया अर्थात् कौसल्या को काल से परे कर दिया। "मेटत कठिन कुअङ्क भाले के" श्रीशंकरजी ने पार्वती से कहा कि मैंने कौसल्या को काल से परे कर दिया, इसलिये कौशल्या हितकारी पद दिया गया है।

श्री विष्णु जी ने आकाशवाणी द्वारा पुनः वार्तालाप किया (यहाँ सखा भाव है), हे शंकरजी ! आपको बारम्बार समाधि तोड़ने में महान् कष्ट होता है। अतः आप कह दीजिये कि मेरे सामने जो जीव आवे तो उसके अनेक जन्मों के सबअघ नष्ट हो जावें।

उत्तर—'एवमस्तु' ऐसा ही हो।

सन्मुख होइ जीव मोहि जबहिं। जन्म अनेक अघनाशहिं तबहिं॥

हर्षित महतारी—अब कौसल्या माता को शंख ध्वनि सुना रहे हैं—योगी लोग समाधि में जो शब्द सुनते हैं वही अनहद शब्द की

ध्वनि माँ को सुना रहे हैं और घण्टा घड़ियाल शंख ध्वनि इत्यादि माँ को ध्यान में सुना रहे हैं। वह शब्द योगियों को ही ध्यान गम्य है।

भगवती उमा ने शंकरजी से पुनः प्रश्न किया ? क्या इससे पहले ध्वनि को माँ नहीं सुनी ? उत्तर-इसलिये नहीं सुनी, कि माथे पर कुंअङ्क लिखा था। जब माथे पर से कुभङ्क मिट गया, तब ध्वनि को सुनने लगीं, दिव्य शंख ध्वनि के प्रभाव से ज्ञान हो गया। माँ ध्वनि को सुनते ही हर्षित (प्रफुल्लित) हुई। जब ध्वनि बन्द हुई, तब कौसल्या की समाधि खुली। अब कौसल्या क्या देख रही है ? कि श्री विष्णु भगवान् के मुख में शंख लगे हुए हैं, उस अपूर्व छबि को देखकर हर्षित हुई। महतारी ने पहचान लिया कि मेरा पुत्र मेरे सामने में है। मैंने इनको अदिति के शरीर से उत्पन्न किया था। इसलिये हर्षित महतारी पद दिया गया है।

मुनिमनहारी = [यहाँ मुनि पद से कश्यप का अर्थ है] मुनियों का मन हरण करने वाला सुन्दर शरीर भगवान् का है अथवा-पुरुषों के मन को हरण करने वाला लक्ष्मीजी का स्वरूप है अथवा-विष्णुजी के वामाङ्ग में लक्ष्मीजी के साथ अपनी दृष्टि से कौसल्या ने दो शिर तथा दो स्वरूप को देखा अर्थात्-लक्ष्मी को पहचान कर यह निश्चय कर लिया कि-मुनिमनहारी वही स्वरूप लक्ष्मी का है।

भगवती पार्वती ने पुनः प्रश्न किया ? हे शङ्कर भगवान् ! यह गुप्त रहस्य मुझे समझाइये। अद्भुत रूप निहारी=कौसल्या अनोखे रूप को देख रही है यह अद्भुत रूप-विशेष रूप से तो एकाङ्ग में विशेषाङ्ग है। अर्थात्-विशेषाङ्ग में चार भुजा, दो शिर, दो मुख, चार नेत्र, इस अद्भुत रूप को देखकर माता ने यह विशेष रूप से निश्चय की चार लोचन दो शिर है तो शरीर भी दो होना आवश्यक है, ऐसा विचार किया।

लोचन अभिरामा = सुन्दर लोचन है। जब कौसल्या माँ की दृष्टि छाती पर पड़ी तो क्या देखती है-श्रीवत्स अथवा -भृगुजी का चरणचिह्न है।

तनु घनश्यामा=सुन्दर लोचन के साथ साथ गौर वर्ण और श्याम वर्ण तन को अर्थात्–मिश्रित तन को देख रही है। "शक्तिः शक्तिमतोरभेदः" सक्ति और शक्तिमान् में भेद नहीं है, ये दोनों अनादि हैं। जैसे–सूर्य की किरण सूर्य से अलग नहीं हैं। माँ ने मिश्रित तन को कैसे समझा ? उत्तर–"जेहि जाने तेहि देहु जनाई" माँ ने जानना चाहा तो उन्होंने जना दिया अर्थात्–प्रत्यक्ष रूप में दो शरीर मिश्रित दीख पड़ी। उसमें दो रङ्ग थे। तनुघनश्यामा–बामाङ्ग में गौर वर्ण और दक्षिणाङ्ग में श्याम वर्ण देख रहीं है अर्थात्–अर्धनारी स्वरूप को देख रही हैं।

निजआयुधभुजचारी––निज=अपना अपना, आयुध=लक्ष्मी की आयुध शंख और कमल है। विष्णुजी का आयुध=सुदर्शन चक्र और कौमुद की गदा है इव दोनों को मिलाकर चारभुजा हुए। अतः यहाँ आयुधभुजचारी पद दिया गया है। यहाँ शंका की निवृत्ति हो गई, क्योंकि मुनिमनहरण नहीं किया, किन्तु लक्ष्मी को धारण दिया हैं। पुराणपुरुषोत्तम हैं। इसलिये मुखारविन्द को देख रही हैं।

भुषणवनमाला=लक्ष्मी का भूषण षोडश शृङ्गारयुक्त है, अर्थात्–आधे अङ्ग में स्वर्ण के आभूषणों से सुसज्जित है, और विष्णुभगवान् का आधे अङ्ग में बनमाला विभूषित है. जो कि भृगुजी का चरणचिह्न को ढाक दिया है। कौसल्या उस समय पुरुष पुरुषोत्तम को निर्वाणरूप ब्रह्म को देख रही है।

नयनविशाल=नेत्रविशाला हैं। अथवा–विष्णुजी के नेत्रों में विष भरा है। सांसारिक जीव विष खाकर प्राण त्याग देते हैं अथवा–उपाय करने पर बच भी जाते हैं अथवा आत्महत्या कर संसार चक्र [जन्म-मरण] में फंस जाते हैं।

यहाँ पर नेत्र गोलक इतना सुन्दर उत्तम है कि भक्तजन देखते हुए थकते नहीं। विष्णु भगवान् के नेत्रों में जो विषभरा आला है अर्थात् नेत्र गोलक है यह तो उत्तम विष भरा आला है, क्योंकि–विष्णुभगवान्

के नेत्रों को तो देखने मात्र से ही विष चढ़ा जाता है। भक्तजन एवं योगिजन को तो जीवन भर तक यह विष चढ़ा ही रहता है। अर्थात् उतरता ही नहीं, क्योंकि योगि ध्यानगम्य हैं, तथा शरीर छुटने पर भी आवागमन के चक्र में नहीं पड़ते।

कौसल्या भी अपने आवागमन के चक्र से छूटने के लिये अपने पुराण पुरुष पुरुषोत्तम के नेत्रों को अपने नेत्रों में मिलाकर ध्यानगम्य है।

शोभा सिन्धु--शोभा = लक्ष्मी की शोभा तो पति के साथ शृंगार-युक्त है। जब पति से वियोग हो जाती है, तब शृंगार की शोभा नहीं रहती है। लक्ष्मी जी की शोभा तो वर्णन करने में आता है, किन्तु विष्णु जी का नयन विशाल की शोभा वर्णन करने में नहीं आता है अवणय है। किन्तु भक्तजन एवं योगिजन वर्णन करते-करते सिन्धु में डूब जाते हैं अर्थात् किसी योगी ने थाह नहीं पाया कि पूर्णरूप से वर्णन कर सका हो, इसलिये सिन्धु के समान है। खरारि = खर दैत्य को मारने वाले शत्रु मेरे सामने खड़े हैं। ऐसा कौसल्या ने कहा अथवा—खरारि = षडविकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य) को मारने वाले ऐसे शत्रु मेरे सामने खड़े हैं अथवा—मनमोहक (सुन्दरता से युक्त) भगवान् का नाम है। अथवा—विष्णु भगवान् अपने हाथ में सुदर्शन चक्र और कौमुद की गदा लिए हुये कौसल्या के सामने अरि = शत्रु के सदृश खड़े हैं।

(छन्द २)

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि विधि करौं अनन्ता।
माया गुन ग्याना तीत अमाना वेद पुरान भनन्ता॥
करुणा सुख सागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति सन्ता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी प्रगट भयउ श्री कन्ता॥

पुनः शैलकुमारी ने प्रश्न किया ? हे शंकर भगवान् ! कौसल्या हाथ जोड़कर कहती है कि मैं आपकी स्तुति किस प्रकार करूँ अथवा—कह दुइ = कौसल्या ने क्या कहा ? उत्तर—जीव भाव छुड़ाने को कहा।

अर्थात् ब्रह्म से यह जीव बहुत दिनों से पृथक् हो रहा है । एक भाव होने के लिये कहा । इसलिये दुइ पद दिया गया है ।

ईश्वर अंश जीव अविनाशी । चेतन अमल सहज सुखराशी ॥

कर जोरी = पार्वती ने पुनः प्रश्न किया ? हे प्राणेश्वर जू !! कौसल्या कहने के बाद फिर क्यों हाथ जोड़ा ? उत्तर—कौसल्या कर (हाथ) जोड़कर कमल बनाया । उमा ने पुनः शंकर जी से पूछा ? हे महादेव जी ! आपने कहा है कि युगल कमल होता है तो यहाँ कर जोड़ने से तो एक ही कमल बनता है, तो दो कमल कैसे हुए ? इसका भेद बतलाइये । कौसल्या माँ ने अपने दोनों करों को अपने माथे से मिला दिया तो युगल कमल हो गया। (अर्थात्—यहाँ सहस्रदल कमल शिर को दोनों करों से मिलाने से युगल कमल हो जाता है) ।

अब अरि के तद्वत् माता के सामने खड़े हैं, तब कौसल्या माँ ने अपने दोनों कमलों को विष्णु भगवान् के चरणों पर चढ़ा दिया । चढ़ा कर अपने मुख से संकल्प किया ।

अस्तुति तोरी = आपकी स्तुति कैसे करूँ अथवा—अस्तु, इ, तोरी कही, यहाँ पर इकार का प्रश्लेष है अर्थात् इकार देने से अर्थ होगा कि यह शरीर आपका है । अर्थात्—आपने यह पंच भौतिक शरीर साधन करने के लिये ही दिया था । अब आपको आत्मसमर्पण कर रहा हूं । आपका साक्षात्कार हो गया । अब इस शरीर का कोई काम नहीं है । यथा—"साधन धाम मोक्ष कर द्वारा" इसी शरीर से ही साधन करके आपको प्राप्त कर इस नश्वर शरीर की कोई आवश्यकता नहीं, आप ईसको सँभालिये । अर्थात्—कौसल्या माँ ने अपने शरीर को ज्यों का त्यों विष्णु भगवान् के चरणों पर चढ़ा दिया ।

केहि विधि करौं = विधि यह है—जैसे भगवान् के चरणों पर पुष्प चढ़ाये जाते हैं और चढ़े हुए फूलों को पुनः वहाँ से उतार लिये जाते हैं । इसी प्रकार कौसल्या भी दोनों कमलों को जोकि एक

किया था । (अर्थात—कर कमल और माथे का सहस्र दल कमल दोनों मिला कर एक कमल बनाया था) उसको विष्णु जी के चरणों पर चढ़ा कर पुनः वहाँ से माथे को हटा दिया । अतः उठाने से फिर कर और शिर हो गया । अब कमल नहीं रहा । कर से यह विधान है कि "कर से कर्म करौं विधि नाना" कौसल्या माँ ने कर्म को पुनः किया—जिन चरणों पर से फूलों को हटाई थीं । उन्हीं चरणों को सेवा करने लिये दोनों हाथों से पकड़ लिया । चरणों को पकड़ने पर कौसल्या का शरीर रोमांचित हो गया ।

उमा ने पुनः शंकर भगवान् से पूछा ? हे भगवन् ! कौसल्या रोमांचित क्यों हुई ? उत्तर—हे पार्वती जू ! कौसल्या कह रही है कि—हमने वेद शास्त्रों और गुरुजनों के तथा सन्त जनों के मुख से सुना है कि भगवान् अपने भक्तों के लिये बिना पद त्राण के अर्थात् नङ्गे पैरों से दौड़ते हुये आते हैं । अतः मेरे ऊपर भी कृपा करने के लिये ही नङ्गे पैरों से मेरे पास आये हैं । यहाँ चरण पकड़ने का कौसल्या माँ ने अनुभव किया कि चरणों के नीचे चरण पादूका नहीं हैं । यही कर से कर्म हो गया । और बिहबल हो गई अर्थात्—कृत्य कृत्य हो गई ।

पुनः रौं = रोने लगी (रौं का अर्थ रोना है और अनुस्वार का अर्थ विन्दु है) अर्थात्—भक्ति रूपी मणिद्रवीभूत होकर बहने लगा । यह बिन्दु सिन्धु रूप होकर विष्णु भगवान् के चरणों पर वर्ष रहा था तो भगवान् माँ के माथे पर हाथ रख कर चुप करा रहे हैं । भगवान् अपने पीताम्बर से माँ का अश्रु पोंछ रहे हैं और माँ अपनी आँचर से भगवान् का अस्रु प्रोंछ रही है । माँ अपने आँसूओं से भगवान् का चरण धो रही है और भक्त वत्सल भगवान् खड़ा होकर अपना चरण धुलवा रहे हैं । यहाँ प्रेमबिन्दु सिन्धु बन गया । यहाँ रौं का कैसे विन्दु हुआ ? तो यहाँ गोसाई तुलसीदास जी की कुशलता है कि ऐसे मौके पर कौसल्या के नेत्रों से विन्दु टपका रहे हैं ।

अनन्ता = पार्वती जी ने पुनः प्रश्न किया ? हे प्राणवल्लभ जू ! जिसका कोई अन्त नहीं है वह अन्त वाला कैसे हुआ ? उत्तर- जिसका कोई अन्त नही पाया उसको अन्त वाला बना कर कौसल्या चरण धो रही है । भक्ति रूपी मणि द्रवीभूत होकर बह रहा है अर्थात्--भक्ति के वशीभूत होकर वह अन्त (सीमा) वाला हो जाता है ।

मायागुनग्यानातीत = माया के गुणों के ग्यान से अतीत-परे हैं । अथवा-हे पार्वती जू ! माया उसको कहते हैं, जिसका स्वरूप परिवर्तनशील हो अर्थात्-बदलता रहता है । माया का तीन गुण है (सत्व रजस् तमस्) । अर्धाङ्ग में गुणवती माया को विष्णु जी अपने तन से अलग कर दिया । तब दो स्वरूप बन गये । यहाँ कौसल्या अपने सामने दो रूप देख रही है ।

ग्यानातीत = एक माया का स्वरूप, दूसरा-ग्यानातीत का स्वरूप यहाँ दो स्वरूप माता जी को दिखला दिये । भगवान् माँ से कह रहे हैं कि-मैं कमल पत्रवत् निर्लेप हूं क्योंकि-लक्ष्मी मेरे मन को हरण नहीं कर सकती । यह अपनी सफाई माँ को दे रहे हैं ।

अमाना=जब माया के साथ थे तब अमाना थे और जब माया को अलग कर दिये तब माना बनकर दो स्वरूप माता जी को दिखला दिये । वेद पुरान भनन्ता = अमाना और माना इन दोनों स्वरूप को वेद पुराण कहते हैं ।

करुना सुख सागर = हे पार्वती जू ! करुणा=दया । भगवान् को जब किसी पर दया करना होता है तब सुख सागर (क्षीर सागर को छोड़ कर अपनी गुणवती माया = (सत्व रजस् तमस्) को साथ लेकर चलते हैं ।

सब गुन आगर = श्री शंकर भगवान् पार्वती जी से कह रहे हैं कि-मायापति भगवान् सब गुणों के आगर = खान हैं । जेहि गावहिं श्रुति सन्ता = जिसको श्रुति भगवती सब गुणों को गान करती हैं ।

और सन्त जन बखान करते हैं, कि भगवान् सुख के समुद्र हैं अर्थात् सब गुणों के खान हैं।

सो मम हित लागी जन अनुरागी प्रगट भयउ श्री कन्ता ॥

कौसल्या कह रही है कि—सो=वह ब्रह्म मम हित लागी=मेरे हित के लिये और भक्तजनों के प्रेम से पुकारने पर प्रगट भयउ=प्रगट हुए। अपनी अर्धाङ्गिनी को अपने तन से अलग करके प्रगट भयउ=दो स्वरूप। श्री कन्ता=श्री लक्ष्मी जी और कन्ता=विष्णु जी इन दोनों स्वरूपों को पृथक्-पृथक् रूप से कौसल्या देख रही है। अर्थात्—मेरे साथ कितना अनुराग है? कि दो स्वरूप का दर्शन दे रहे हैं। सो जाने जेहि देहु जनाई।

कौसल्या और भी दीख रही है, क्या देख रही है? कि विष्णुजी को अपनी भृकुटी से इसारे करते हुए देख रहीं है कि अपनी माया को अपनी शरीर से पृथक् कर रहे हैं, जो कि देखने मात्र से ही सृष्टि बनाई। पलक गिराते और उठाते हुए हैं, उस स्वरूप को भी देख रही है। जो कि अपनी माया से ब्रह्माण्ड को निर्मित कराया था। उस स्वरूप को भी देख रही है।

ब्रह्माण्ड निकाया निर्मित माया रोम-रोम प्रतिवेद कहै।
मम उर सो वासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहे ॥
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत विधि कीन्ह चहैं।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहे (छ०३)॥

पुनः शंकर जी से पार्वती ने प्रश्न किया? हे भगवन्! कौसल्या क्या देख रही है? कि—विष्णु भगवान् का जब पलक उठा, तब क्या देखा कि—निमेषमात्र से ही, निर्मितमाया ब्रह्माण्ड निकाया=विष्णु जी ने माया की इसारा कराकर अपनी शरीर से क्षणमात्र में संपूर्ण ब्रह्माण्ड का निर्माण करा दिया।

रोम-रोम प्रति वेद कहे=पार्वती ने शंकर भगवान् से पुनः प्रश्न किया? कि—हे शंकर भगवान् यह रहस्य भी मुझे समझाइये। सुनिये,

कौसल्या को भगवान् विष्णु ने अपने विराट् स्वरूप को आश्चर्यजनक प्रतिरोम में दिखलाया । ऐसी बात वेदों ने कहे । विराट् स्वरूप का वर्णन—देखरावा मातहिं निज अद्भुत रूप अखण्ड ।

रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मण्ड (बा० का० दो० २०१)
अगणित रवि शशि शिव चतुरानन । बहुगिरि सरित सिन्धु महिकानन ॥
काल कर्म गुन ग्यान सुभाऊ । सोउ देखा जो सुना न काऊ ॥
देखी माया सब विधि गाढ़ी । अति सभीत जोरें कर ठाढ़ी ॥
देखा जीव नचावइ जाहीं । देखी भगति जो छोरइ ताही ॥
तन पुलकित मुख बचन न आवा । नयन मूँदि चरननि शिर नावा ॥
विस्मयवन्त देखि महतारी । भये बहुरि शिशु रूप खरारी ॥
अस्तुति करि न जाइ भयमाना । जगत पिता मैं सुत करि जाना ॥
हरि जननी बहुविधि समुझाई । यह जनि कतहुं कहसि सुनु माई ॥
बार बार कौसल्या विनय करइ कर जोरि
अब जनि कबहुं व्यापै प्रभु मोहि माया तोरि (बा०दो० २०२)

फिर पार्वती ने शंकर भगवान् से प्रश्न किया ? उत्तर—हे प्राण बल्लभजू ! विष्णु भगवान् कौसल्या से क्या कहा ? मुझे समझाइये उन्होंने यह कहा कि हे माता जी मुझे अपनी गोदी में ले लीजिये क्योंकि आपका मैं पुत्र हूं । इस प्रकार से कहा । उपर्युक्त सब दृश्य विष्णु ने माँ को विराट् स्वरूप को दिखलाया तो माँ बोली इस विराट् स्वरूप को मैं गोदी में कैसे ले सकती हूं ।

मम उर सो वासी—कौसल्या ने भगवान् से पूछा ? कि आप मेरे उर (गर्भ) में वास किये होते तो मैं आप को गोदी में ले लेती । आपने तो मेरे उदर में वास ही नहीं किया है तो मुझे माँ कैसे कहते हो ? उत्तर—यह उपहासी = दुनियाँ हँसी करेगी । यदि आप दशरथजी के आत्मज होते तो मैं आपको गोदी में ले लेती । मम उर सो वासी यहाँ उर शब्द गर्भ वाचक है ।

"प्रजापतिश्चरति गर्भेऽन्तरजायमानो वहुधा विजायते" ॥
(शुक्लयजुर्वेद अ० ३१, मं० १९)

प्रजापतिः = प्रजानां जीवानां पतिः संरक्षकः (संपूर्ण प्राणियों के संरक्षक) अंन्तः = परमात्मा अन्तर्यामी रूप में सबके अन्तःकरण में स्थित, गर्भेचरति = समस्त प्राणियों के देह में जीवात्मा रूप से निवास करने वाला, अथवा-गर्भेचरति = गर्भस्थ प्राणी मात्र के हृदय में जीवात्मा रूप से होकर सबके अन्दर विचरता है अर्थात्-निवास करता है । अजायमानः = न उत्पन्न होने वाला, अपने सामर्थ्य से जगत को उत्पन्न करके उसी उसी स्वरूप में प्रविष्ट होकर अन्तर्यामी रूप से सर्वत्र विचरता है । ("तत् सृष्ट्वा तद्रूपोऽभवत्") इति श्रुतिः । उत्पत्ति विनाश शील धर्म रहित (नित्यत्व होते हुए) भी, बहुधा = बहुत प्रकार से, विजायते = प्रगटी भवति प्रगट होता है । अथवा-वह अपनी गुणवती माया के साथ प्रपंच रूप से प्रगट होता है । "निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गोपार" जो इन्द्रियों से परे है वह अपनी इच्छा से गुणवती माया को लेकर प्रगट होता है ।

यहाँ हरि का अर्थ है = दुख को हरण करने वाला । तथा भय को दूर करने वाला एवं कौसल्या के जन्म मरण के दुःख रूप भय को छुड़ाने वाला ।

जा दिन ते हरि गर्भहि आये-जिस दिन से कौसल्या के अन्तः-करण में अन्तर्यामी रूप से हरि विचरने लगे । सकल लोक सुख सम्पन्नि छाये-उस दिन से संपूर्ण लोकों में सुख और सम्पति भर पूर्ण हो गया अर्थात् इतना अधिक धन संपति रहा कि कोई पारावार नहीं था 'हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्' हिरण्य गर्भ नाम से प्रागट हुए । 'राम' ऐसा नाम जब वसिष्ठ जी रखेंगे तब होगा ।

"जग निवास प्रभु प्रगटे, अखिल लोक विश्राम"
"चैत्रे मेषे सिते पक्षे नवम्यां च पुनर्वसौ"
मध्याह्ने कर्कटे लग्ने जातो रामः स्वयं हरिः ॥

त्रेता युग, चैत्रमास (मधुमास), शुक्ल पक्ष, नवमी तिथि, भौमवार, मेषराशि में स्थित सूर्य, कर्क लग्न में, पुनर्वसु नक्षत्र के चौथे

चरण में मध्याह्नकालीन वेला में, महल के अन्दर, अपने कमरे में, महारानी कौसल्या अपने नेत्रों को बन्द कर ब्रह्म को साक्षात्कार पुत्र रूप में, प्राप्त करने के लिये ध्यान में मग्न थी। उसीसमय तेजोपुञ्ज चिन्मय ब्रह्म अप्रगट ब्रह्म महा विष्णु प्रगट भये।

पार्वती ने कैलाशपति महादेव जी से प्रश्न किया ? हे स्वामीजू ! महाविष्णु जी कौसल्या को कितने स्वरूप दिखलाये ?

उस चिन्मय प्रकाश के द्वारा कौसल्या के नेत्र खुली। तब उन्होंने अपनी माँ को अनेकों रूप दिखला रहे हैं--

विराट् स्वरूप, खरारि स्वरूप, अनन्त स्वरूप, अद्‌भुतरूप (मिश्रित-स्वरूप, शक्तिसंयुक्त, अर्थात्-वामाङ्ग में लक्ष्मी का और दक्षिणाङ्ग में अपना स्वरूप) श्रीकन्ता स्वरूप, इस प्रकार पृथक् पृथक् करके अपने स्वरूपों का दर्शन कराया। विराट् स्वरूप में ही माँ की गोदी में बैठने को कहा। माँ ने शिशुरूप धारण करने को कहा। अपने तन से लक्ष्मी को पृथक करते हुए दिखलाया। भगवान् के विराट् रूप आश्चर्यजनक देखकर माँ चकित हो गई और उन्होंने साधारण मानवीय शिशुरूप धारण करने के लिये प्रार्थना की। तब-होइ बालक सुरभूपा-अपनी इच्छा से तुरन्त ही छोटा सा शिशुरूप होकर माँ की गोदी में खेलने लगे।

पूर्व दिये हुए बरदान को चरितार्थ करने के लिये तत्क्षण में ही शिशुरूप होकर माँ की गोदी में खेलने लगें। प्रभु ने माता को संकेत किया कि मेरे विराट स्वरूप की चर्चा किसी से मत करना।

विस्मयवन्त देखि महतारी। भए बहुरि शिशुरूप खरारी।
अस्तुति करि न जाई भयमाना। जगत पिता 'सुत करि जाना'॥
हरि जननी बहुविधि समुझाई। यह जनि कतहुं कहसि सुनु भाई॥
बार बार कौसल्या बिनय करैं कर जोरि।
अब जनि कबहुं ब्यापै प्रभु मोहि माया तोरि॥ (बा०का०दो० २०२)

सुनत धीर मति थिर न रहे = महाराज चक्रवर्ती दशरथ जी यह

शक्तिःशक्तिमतोरभेदः

(शक्ति और शक्तिमान में कोई भेद नहीं है, अनादि है।)

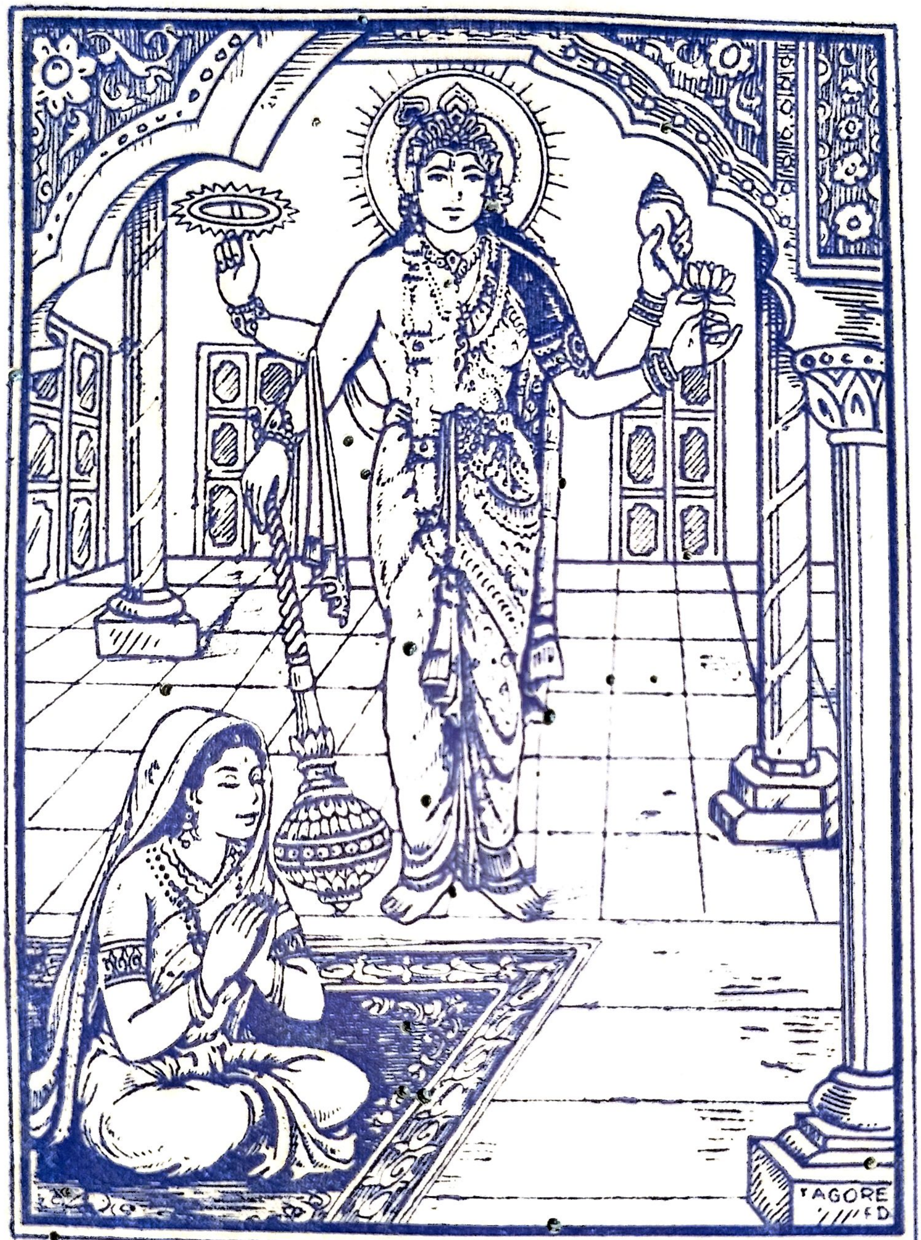

कौसल्या संयुक्त शक्तिध्यानमग्ना अस्ति

माता कौसल्याजी संयुक्त शक्ति भगवान् में ध्यान मग्न हैं

(२८ वें पेज का)

सुनेंगे कि कौसल्या के गर्भ से बालक नहीं हुआ तो उनकी मति थिर नहीं रहेगी अर्थात्—वे तो सुनते ही धैर्य छोड़ देंगे ।

उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना—पार्वती जी ने शंकर भगवान् से पुनः प्रश्न किया ? हे प्राण बल्लभ जू ! सावधान होकर सुनिये । आपने कहा कि विष्णु भगवान् क्यों मुसुकाये ? जब यह ग्यान माता जी को धीरे-धीरे उत्पन्न हुआ, कि—मेरे गर्भ से उत्पन्न नहीं हुए तब प्रभु ने मुसुकरा दिये अर्थात्—पर्दा डाल दिये क्यों कि आगे बहुत विधि से चरित कीन्ह चहे, लीला करना चाह रहे हैं, इसलिये उस क्षणिक ग्यान का आवरण कर दिये । यहाँ दो प्रकार का मुस्कराना है । एक तो हँसना और दूसरा—काना—रोना है । यह चरित्र करना चाह रहे हैं । मुसुकराने का यह अभिप्राय है कि—पूर्व जन्म की सुधि को विस्मरण करा कर पुनः स्मरण दिलवा रहे हैं । यहाँ भगवान् कौसल्या के हितकारी है । दशरथ जी को तो पुत्र इष्णा के हेतु से हितकारी नहीं हुए, क्योंकि माता कौसल्या को तो अलौकिक ज्ञान मिला था । इसलिये कौसल्या के हितकारी हुए ।

मातु विवेक अलौकिक तोरे । कबहुं न मिटिहिं अनुग्रह मोरे ।।

कहि कथा सुहाई मातु बुझाई—माता कौसल्या को श्रोता बनाकर तीन जन्म की सुन्दर कथा कहकर, माता जी को समझा बुझा दियें । यहाँ कथा लिखी जाती है—

पार्वती ने पुनः प्रश्न किया ? विष्णु भगवान् ने कौन सी तीन जन्म की कथा सुनाई है ? हे नाथ ! इसको विस्तार पूर्वक सुनाइये—

कश्यप अदिति महा तप कीन्हा । तिन्ह कहँ मैं पूर्व वर दीन्हा ।।

तीन जन्म की कथा कौसल्या माँ को सुना रहे हैं—

१— प्रजापतिश्चरति गर्भेऽन्तरजायमानो—सर्व प्रथम तो कश्यप ऋषि के साथ आप ने अदिति के रूप में शरीर धारण किया था । उस समय सब देवताओं को अपने गर्भ से उत्पन्न किया था और मुझे भी उत्पन्न किया था । इसलिये तू माँ है । तब माँ पुत्र

रूप समझने लगीं ।

२– दूसरे जन्म की कथा—मनुसतरूपा=कश्यप और अदिति दोनों ही ही मनुसतरूपा हुए । पुनः दोनों दम्पति नैम्यषारण्य तीर्थ में जाकर घोर तपस्या करके वरदान प्राप्त कर ब्रह्म को साक्षात्कार किया । जब ब्रह्म को पुत्र रूप में अपने गोदी में खेलाना चाहा । तब ब्रह्म राम रूप में होऊँगा ऐसी आकाशवाणी से कहा था ।

३– ते दशरथ कौसल्या रूपा । कौसलपुर प्रगट नर भूपा ॥
तिन्ह के गृह अवतरिहौं जाई । रघुकुल तिलक सुचारौं भाई ॥

उस आकाशवाणी द्वारा ब्रह्म ने कहा—तुम दोनों जाओ अयोध्या के राजा दशरथ और आप महारानी होओ । इस प्रकार वे मनुसतरूपा, दशरथ और कौसल्या प्रगट हुए । इस पूर्वदत्त वरदान को पूर्ण करने के लिये ही आपके समक्ष पुत्र रूप में प्रगट हुआ हूं । ऐसा कह कर माता को समझा बुझा दिया । वेद विदित तेहि दशरथ नाऊँ -- वेद को बनाने वाला जो विदित (विख्यात) है उसका नाम अज (ब्रह्मा) अज शरीर से दशरथ हुए । उस वरदान को पूर्ण करने के लिये ही सृष्टि-कर्ता ब्रह्मा ने अज के शरीर धारण करके रघुकुल में प्रगट हुए । तभी से अज पुकारे जाते हैं । अज=ब्रह्मा कहलाते हैं । इस प्रकार अज महाराज के पुत्र दशरथ कहलाये । ऐसी कथा कह कर माँ को समझा बुझा कर कह दिये । अतः मैं आपका पुत्र हुआ हूं ।

जेहि प्रकार सुत प्रेम लहे = जिस प्रकार पुत्र का प्रेम हो वही काम कीजिये ।

माता पुनि बोली, सो मति डोली, तजहु तात यह रूपा ।
कीजै शिशु लीला अति प्रिय शीला, यह सुख परम अनूपा ॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना, होइ बालक सुर भूपा ।
यह चरित ये गावहिं हरि पद पावहिं, तेन परहिं भव कूपा ॥ (छन्द, ४)

उमा ने शंकर भगवान् से पूछा ? सावधान होकर सुनिये । वे अभी बालक नहीं बने किन्तु विष्णु जी और लक्ष्मी जी ये दोनों अलग खड़े हैं ।

सो मति डोली—यहाँ भगवान् माँ की बुद्धि पर पर्दा डाल दिये थे अर्थात्—माँ की बुद्धि बदल दी थी, तो फिर कौसल्या क्या कह रही है ? हे शंकर जी ! यह रहस्य मुझे समझाइये । भगवान् यह कह रहे हैं कि—हे माँ ! मुझे गोदी में ले लीजिये माता पुनि बोली = माँ पुनः बोली कि हे महाराज ! आप गोदी में लेने को कह रहे हो तो इस विराट् स्वरूप को और अर्धनारी स्वरूप को इन दोनों को छोड़ दीजिये शिशु रूप को धारण कीजिये । अभी बालक नहीं बने और अपनी लीला प्रारम्भ कर दिये । विराट् स्वरूप में ही रोने लगे । कौसल्या माँ उनको चुप कराने लगी तो रोदनठाना तब वे अधिक ज़ोर से रोने लगे (हठ कर जमीन पर लोटने लगे) । कौसल्या अपनी आँचर से भगवान् का अश्रु पोंछ रही है और भगवान् अपनी माँ को अपने पीताम्बर से अश्रु पोंछ रहे हैं । इस प्रकार दोनों जन परस्पर आँसुओं को पोंछ रहे हैं ।

यहाँ उनका स्वरूप विराट् था तो उनके रोने का शब्द भी विराट् ही था---परन्तु उस रोने का शब्द (आवाज) केवल कौसल्या माँ को ही सुनाई देता था और किसी को उस रोने का शब्द सुनाई नहीं देता था । किन्तु जब शिशु रूप धारण कर रोने लगे, तब सब को रोने का आवाज सुनाई पड़ा । यह लीला है ।

जब रोकर दोनों चुप हो गये । तब कौसल्या माँ ने पुनः कहा, मैं तो आपको बालक होने को कहा तो आपको दुःख क्यों हुआ ? और रोने क्यों लगे ? भगवान् ने कहा---हम चाहे कितने ही बड़े क्यों न विराट् स्वरूप धारण कर लेवें ? परन्तु माँ के सामने तो बालक ही कहाऊँगा । आपको रोना पसन्द था । इसलिये मैं भी रोने लगी थी ।

अब आप पीताम्बर वगैरह वस्त्र आदि छोड़ कर निर्वाण रूप हो जाइये । क्योंकि माँ बेटे में कोई किसी प्रकार का पर्दा नहीं रहता है । अब आप शिशु लीला कीजिये । परन्तु विष्णु ने विचार किया कि लक्ष्मी के सामने में नग्न होना ठीक नहीं है ।

तब लक्ष्मी को इसारा किया कि अब यहाँ से पृथक् होकर मायापुरी (जनकपुर में) चली जाओ । उसी समय वहीं पर पृथ्वी

में समागई । अर्थात् प्रवेश हो गई । पुनः आठ वर्ष के बाद जनकपुर में प्रगट हुई । अपनी अर्धाङ्गिनी को इसलिये अलग किया कि पुनर् विवाह करके लाऊँगा । जिस समय भगवान् की इच्छा शिशु रूप धारण करने की हुई । उसी समय लक्ष्मी पृथ्वी में प्रवेश हो गई ।

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा ।

माँ पुनः बोली हे तात ! यह विराट् स्वरूप को छोड़ दो, तो तुरन्त ही माँ के सामने दो भुजधारी बन गये ।

कीजै शिशु लीला अति प्रिय शीला यह सुख परम अनूपा ।

शिशु लीला कीजिये जो सब को अत्यन्त प्रिय और सुखकारी हो तथा उपमा रहित लीला हो ।

सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होई बालक सुर भूपा

भगवान् माँ का बचन सुन कर उसी समय सबको शिरोमणि बालक होकर रोने लगे शिशु के रुदन सुन कर सब रानियाँ तुरन्त दौड़कर चलीं आईं । उसी समय कौसल्या माँ की गोदी में खेलने लगे ।

ब्रह्म व्यापक निरञ्जन निर्गुन विगत विनोद ।

सो अज प्रेम भक्ति वश कौसल्या के गोद ।। (वा०का०दो० १९८)

जो सर्वत्र व्यापक ब्रह्म, निरञ्जन = माया रहित निर्मल है निर्गुन = (सत्त्व, रजस् तमस्) इन तीनों गुणों से परे हैं अर्थात्— दिव्य गुण विशिष्ट वाला अजन्मा और विनोद रहित है, वही ब्रह्म भक्ति माता कौसल्या के वश होकर उसकी गोदी में खेलने लगे । उसी समय शिशु लीला करने लगे ।

यह चरित ये गावहिं = भक्त और भगवान् का चरित, जो गावहिं – अर्थात्—प्रेम से पुकारहिं । ते = वे प्रभु, आवहिं = गोद में खेलावहिं ते हरि पद पावहिं । ते न परहिं भव कूपा अर्थात्—भगवान् श्री राम जी को प्राप्त कर वे प्राणी (जीव) पुनः भव कूपा न परहिं – संसार चक्र से छूट जाते हैं अर्थात् आवागमन से रहित हो जाते हैं ।

शिवाशिव संबाद चार छन्दों की व्याख्या समाप्त ।

श्री सीताराम समर्पणमस्तु इति शुभं भूयात् ।

राम ब्रह्म चिन्मय अविनाशी । सर्व रहित सब उर पुर वासी ॥

सबसे रहित अर्थात्—सकल, वस्तुओं से इतर अर्थात् विलक्षण है। और सबके हृदय में वास करने वाला है।

श्री वसिष्ठ मुनि ने नामकरण 'राम' ऐसा किया ।

गुरु वसिष्ठ कहँ गयउ हँकारा । आये द्विजन सहित नृप द्वारा ॥
अनुपम बालक देखिन्ह जाई । रूप राशि गुन कहि न सिराई ॥
नाभि गम्भीर जान जेहि देखा । ... ... ॥
इन्हके नाम अनेक अनूपा । ... ... ॥
जो आनन्द सिन्धु सुख रासी । सीकर ते त्रयलोक सुपासी ॥
सो सुख धाम राम अस नामा । अखिल लोक दायक विश्रामा ॥

यहाँ माँ की गोदी में भगवान् शिशु लीला कर रहे हैं। इतने में श्री गुरु वसिष्ठ जी "अनुपम बालक देखिन्ह जाई" द्विजों सहित देखने आये । कौसल्या माँ अपनी आँचर से राम जी को ढाँक रखी हैं । श्री गुरु वसिष्ठ जी ने कौसल्या से कहा कि—मुझे दर्शन कराइये । उसी समय माता जी ने बालक के चरण की तरफ से कपड़े को जोर से खोला तो कपड़ा मुख पर आ गया । तब क्या देखा ? 'अनूपम' नाभि गम्भीर, इस नाभि से ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए हैं। इसलिये 'अनूपम' कहा गया है । अर्थात्—नार रहित नाभि थी, और दूसरा—बालक का चिन्ह नपुंसक है अर्थात्—ब्रह्मकुल में हैं । क्योंकि ब्रह्म शब्द को संस्कृत में नपुंसक लिङ्ग मानते हैं इसलिये नपुंसक कहा गया है ।

पुनः वसिष्ठ जी ने मुख पर से कपड़ा हटाने को कहा। जब माता ने मुख पर से कपड़ा हटाई । तब मुख का स्वरूप देखकर स्वरूप के राशि का गुन गिने, किन्तु किसी से कहने में नहीं आता है, क्योंकि—यदि रूप राशि के गुण को कहने में लग जाऊँगा तो उत्सव में व्यवधान (रुकावट) हो जायेगा । (यह बालक तो दशरथ जी के रूप राशि गुणों पर गया है) अतः इस अनूपम बालक के रूप राशि और गुन कहने में नहीं आता और इनका नाम 'राम' है। इस प्रकार नामकरण हुआ।

भगवान् श्रीरामजी का ऐश्वर्य परत्व वर्णन

राम काम शत कोटि सुभग तन । दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन ॥
शक्र कोटि शत सरिस विलासा । नभ शत कोटि अमित अवकासा ॥

दोहा—मरुत कोटि शत विपुल बल, रवि शत कोटि प्रकास ।
शशि शत कोटि सुशीतल, शमन सकल भव त्रास ॥
काल कोटि शत सरिस अति, दुस्तर दुर्ग दुरन्त ।
धूमकेतु शत कोटि सम, दुराधर्ष भगवन्त ॥ (उ० का० ९१)

प्रभु अगाध शत कोटि पताला । शमन कोटि शत सरिस कराला ॥
तीरथ अमित कोटि सम पावन । नाम अखिल अघ पूग नशावन ॥
हिम गिरि कोटि अचल रघुवीरा । सिन्धु कोटि शत सम गम्भीरा ॥
कामधेनु शतकोटी समाना । सकल काम दायक भगवाना ॥
शारद कोटि अमित चतुराई । विधि शत कोटि सृष्टि निपुणाई ॥
विष्णु कोटि शत सम पालन कर्ता । रुद्र कोटि शत सम संहर्ता ॥
धनद कोटि शत सम धनवाना । माया कोटि प्रपंच निधाना ॥
भार धरन शत कोटि अहीशा । निरवधि निरुपम प्रभु जगदीशा ॥

छन्द—निरुपम न उपमा आन राम समान निगमागम कहे ।
जिमि कोटि शत खद्योत सम रवि कहत लघुता लहे ॥
एहि भाँति निज निज मति विलास मुनीश हरिहिं बखानहीं ।
प्रभु भाव गाहक अतिकृपाल सप्रेम सुनि सुख मानहीं ॥

दोहा—राम अमित गुन सागर थाह कि पावइ कोई ।
सन्तन सन्ह जस कछु सुनेउँ तुमहिं सनेउँ सोई ॥

सो०—भाव वश्य भगवान, सुख निधान करुणा भवन ।
तजि ममता मदमान, भजिय सदा सीता रमन ॥

इति शुभं भूयात्

अयोध्या का० दो० ४१ वें के ऊपर की चौपाई और नीचे की चौपाई की व्याख्या—

सुनु जननी सोइ सुत बड़ भागी । जो पितु मातु वचन अनुरागी ॥

कैकयी से श्री राम जी कहते हैं कि हे माता जी ! माता पिता की आज्ञा को पालन करने वाला पुत्र बड़भागी होता है । बड़भागी का दो अर्थ है सामान्य और विशेष । सामान्य धर्म को मानने वाला भाग्यवान् पुरुष है । और श्रेष्ठ धर्म पिता की आज्ञा पालने वाला बड़भागी (विशेष धर्म) है, "पितु आयसु सब धर्म की टीका" पिता को सन्तुष्ट करने वाला पुत्र बड़भागी होता है । यहाँ पिता पुत्र में अन्योन्याश्रय भाग्य सापेक्ष है ।

कैकयी ने दसरथ जी से पूर्व ही दो वरदान माँगी थी कि मेरे गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा, वही राजगद्दी पर बैठेगा । राम जी कैकयी से कह रहे हैं कि यहाँ तो वसिष्ठ मुनि और वाम देव मुनि हैं किन्तु जंगल में विशेष मुनि लोग मिलेंगे । इसलिये वन में मेरा सब प्रकार सुपास होगा ।

भरत प्राणप्रिय पावहिं राजू । विधि सब विधि मोहि सन्मुख आजू ॥

एक समय श्री राम जी दसरथ जी की प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिये, वन को जा रहे हैं—श्री राम जी माता जी से बोल रहे हैं कि—ब्रह्मा मेरे ऊपर सब प्रकार से आज अनुकूल हैं । विधि = ब्रह्मा दोनों के सामने खड़ा होकर कह रहे हैं । हमारे सामने और तुम्हारी बाईं ओर विधि (ब्रह्मा = राम) खड़े हैं । राम जी के सामने यात्रा के समय पुस्तक लेकर खड़े हैं । "कर पुस्तक दुइ विप्र प्रवीना" दूसरा—विधि (ब्रह्मा) कैकयी से बता रहे हैं कि जो कुछ शुभाशुभ कर्म तुम्हारे पास है, वे सब, सबविधि = श्री राम जी के सामने में सब कुछ समर्पण कर दो । तब क्षीर नीर को अलग करने वाली हंसिनी रूपिणी कैकयी, ब्रह्मा के आगे ही "अमृत, विष तथा कल्प बृक्ष और

एरण्ड" इन सबको अलग कर दी। अमृत रूप यश और कल्पवृक्ष ये दोनों श्री राम जी को दे दी, क्योंकि जंगल में श्री राम जी के कार्य में आयेंगे और विष रूप अपयश, एरण्ड इन दोनों को अपने पास ही रख ली। क्योंकि—"पति अनुकूल प्रेम दृढ़" कैकयी पति के अनुकूल हुई थी और कौसल्या एवं सुमित्रा ये दोनों पति के अनुकूल नहीं हुई।

तुरीय, प्राज्ञ, विश्व, तैजस चार

अवस्थाओं का वर्णन—

श्री महानुभावों को कुछ विशेषताओं को दिग्दर्श कराते हैं—महाराज कुशध्वज की दो कन्याएँ थीं उनमें से बड़ी कन्या माण्डवी देवी, यह भरत जी की पत्नी थी। और श्रुत कीर्ति देवी, शत्रुघ्न जी की पत्नी थी। सुनयनाम्म्बा की कन्या उर्मिला देवी यह लक्ष्मण जी की पत्नी थी।

नीचे श्लोक राम रहस्य उपनिषद् का है।

अकाराक्षरसम्भूतः सौमित्रिविश्वभावनः।
उकाराक्षरसम्भूतः शत्रुघ्नस्तैजसात्मकः॥
प्रज्ञात्मकस्तुभरतो मकाराक्षर सम्भवः।
अर्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैक विग्रहः॥

विराट् स्वरूप	प्राज्ञ	विश्व	तैजस	देवता
अर्धमात्रा—				
श्री राम जी है	भरत जी है	लक्ष्मणजी है	शत्रुघ्नजी है	देवता है
तुरीया	सुषुप्ति	जाग्रत्	स्वप्न	अवस्थायें है
जानकी जी है	माण्डवी	उर्मिला	श्रुत कीर्ति	अवस्थायें है
	सत्व	रजस्	तमस्	गुण
भक्ति	तपस्या	सेवा	श्रद्धा	सेफलप्राप्तहोतेहै
मोक्ष	धर्म	काम	अर्थ	फल है

जीव दशरथ हैं उनके उरालय रूपी मण्डप में चारि अवस्थायें हैं। जाग्रत् अवस्था संपूर्ण-जगत् है। २४ तत्त्वों को स्थूल शरीर भोग है, इसका देवता विश्व है। जाग्रत् अवस्था उर्मिला है, और लक्ष्मण जी विश्व है। १७ तत्त्वों के लिङ्ग शरीर के भोग को स्वप्नावस्था कहते हैं, तैजस् देवता है दिव्य स्वप्न श्रुतिकीर्ति है, तैजस् शत्रुघ्न जी हैं। जाग्रत् के २४ तत्त्व, और स्वप्न के १७ तत्त्व जब सुख में लय हो जाते हैं। इस कारण शरीर के आनन्द भोग को सुषुप्ति कहते हैं, माण्डवी सुषुप्ति है, और भरत जी उसके प्राज्ञ देवता हैं। इन तीनों अवस्थाओं से रहित आनन्द विग्रह अन्तर्यामी राम जी हैं, और जानकी जी ब्रह्मानन्दरूपिणी तुरीयावस्था है।

जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीया अवस्थायें अपने-अपने पति को प्राप्त किये। जाग्रत् अवस्था उर्मिला है पति लक्ष्मण जी विश्व देवता है। स्वप्नावस्था श्रुतिकीर्ति पति शत्रुघ्न जी, तैजस देता है। सुषुप्ति अवस्था माण्डवी पति भरत जी प्राज्ञ देवता है। तुरीयावस्था जानकी पति राम जी विभुअन्तर्यामी हैं। इनके गुण सत्व रजस् तमस् गुणातीत राम जी है। चारों फल-धर्म, काम, अर्थ, मोक्ष, क्रियाओं के सहित (सेवा श्रद्धा तपस्या भक्ति) प्राप्त होते हैं।

राम मंत्रार्थ तत्त्वत्रय और अर्थ पञ्चक

रकारार्थो रामः सगुणपरमैश्वर्य जलधि—
मकारार्थो जीवः सकल विधि कैङ्कर्य्य निपुणः ॥
तयोर्मध्याकारोयुगलमथ संबन्धमनयो—
रनन्यार्हं ब्रूते त्रिनिगमस्वरूपोऽयमतुलः ॥

राम मन्त्र में—राम् = अव्यय है रकार में चतुर्थ्यन्त पद लुप्त है आकार में प्रथमान्त पद लुप्त है, मकार में षष्ठ्यन्त पद लुप्त है, रामाय में चतुर्थ्यन्त पद है, न, पञ्चम्यन्त, मः, षष्ठ्यन्त पद है।

अर्थ—रकारार्थ वाच्य, दिव्य गुणों से विशिष्ट नित्य दिव्य त्रिपाद

विभूति ऐश्वर्य के समुद्र पर ब्रह्म राम जी है। मकारार्थ वाच्य, जीव, मन वचन कर्म से संपूर्ण कैङ्कर्य्यों में निपुण श्री लक्ष्मण जी जीव स्वरूप हैं। रकार मकार के मध्यगत आकार है वह युगल नाम—रकार ब्रह्म मकार जीव के परस्पर नित्य विशिष्ट संबन्ध निश्चय कराने वाली श्री सीता जी हैं। यह वेदोक्त सिद्धान्त वेदत्रय स्वरूपार्थ अतुलनीय है मैं अनन्य भाव से कहता हूं। इस प्रकार ब्रह्म जीव माया इन तीनों को बोध होता है। दूसरा अर्थ—रकार से परस्वरूप का, मकार से स्वस्वरूप का अकार से आचार्य स्वरूप का ज्ञान होता है।

अथवा—अकार वाच्य सीता सहित रकार वाच्य सर्व जगत्कारण पर ब्रह्म राम, सकल कैङ्कर्य्य निपुण ज्ञानाश्रय मकार वाच्य जीव लक्ष्मण दास भूत है।

रामित्यनेन बीजेन ब्रह्म माया हि चेतनः।
वदन्ति वेद शास्त्राणि सिद्धाः सिद्धान्तपारगाः॥

राम्—इस बीज से ब्रह्म माया जीव प्रतिपादित हैं ऐसा वेद शास्त्र वेदान्त सिद्धान्त पारङ्गत सिद्ध जन कहते हैं।

रामाय में राम हैं सो श्री भू नीला देवियों सहित श्री प्रिया जू (सीता जू) तथा पञ्चविध (नित्य, मुक्त, मुमुक्षु बद्ध, कैवल्य) जीवों के साथ, दिव्यानन्दमय मंगल विग्रह स्वरूपानन्द दिव्य धाम में हैं। 'रामाय' में चतुर्थी विभक्ति है, आय पद का अर्थ षडैश्वर्ययुक्त पर वैभव नायक श्री राम जी के लिये नित्य कैंकर्य करना ही मेरा जीव का धर्म (प्रयोजन) है। सर्वविधि जीव का प्रतिपालक, संरक्षक राम को समझें। तब राम जी जीव के जन्म जन्मान्तरीय कर्म बन्धनों को तोड़ कर ममाकार अहङ्कार रूप जन्म मरण दुःखप्रद शरीर को नाश कर अपने चरणों की भक्ति प्रेमानुरागमय सेवा देते हैं (नमः) मः यह षष्ठ्यन्त पद है, न अव्यय है निषेध वाचक है सेवा में मेरा ममत्व भोग्यत्व बुद्धि, न नहीं है राम सेवा करने के लिये ही मेरा कर्तव्य है। अथवा संसार तरणोपाय मः मेरा कर्तव्य न नहीं यहाँ नमः नमस्कार

अर्थ नहीं होता राम मंत्रार्थ समाप्त ।

राम् बीज का रकार रामाय का रकार इन दोनों रकारों से राम जी को ब्रह्म, एवं बीज का मकार रामाय का मकार और नमः का मकार तीनों मकारों से चित् जीव का बोध है चिद् वस्तु जानो । बीज का आकार रामाय चतुर्थी आय तथा इन दोनों रकार का आकार और मकार का अकार इन चारों में से अचित् (माया) जानिये अर्थात्—चित् (जीव) अचित् (माया) और ब्रह्म सहित तत्त्वत्रय का ज्ञानार्थ है दोनों रकारार्थ वाच्य राम जी । अकारार्थ वाच्य किशोरी जू तीनों मकारार्थ वाच्य जीव युगल कैङ्कर्य करने के लिये ही है । रां बीज से जीव भगवत् अनन्यर्ह शेषत्व, रामाय पद से भगवत् अनन्यार्ह भोग्यत्व, नमः पद से अनन्योपायत्व भोग्यवस्तु भोक्ता (राम) की रुचि के अनुसार रहती है यह आकार त्रय का ज्ञानार्थ है ।

'रम्' बींज से (जीव) स्वरूप, राम पद से प्राप्य (ईश्वर) स्वरूप, व्यक्त चतुर्थी आय पद से उपाय स्वरूप, अखण्ड नमः पद से फल स्वरूप, सखण्ड नामः नकार मकार भिन्न केवल षष्ठ्यन्त मकार से विरोधि स्वरूप, ये ही स्वस्वरूप, ईश्वर रूप, उपाय स्वरूप, फलस्वरूप, और विरोधि स्वरूप अर्थ पंचक ज्ञानार्थ है ।

श्रीमद् रामचन्द्र चरणौ शरणं प्रपद्ये, श्रीमते रामचन्द्राय नमः ।

श्रीमद् श्री किशोरी जी सहित (रामचन्द्र) नित्य दिव्य गुणों के धाम चराचर में रमण करने वाले (चन्द्र) शरणागतों को आह्लादित करने वाले, चरणौ=श्री सीता राम जी के चरणों में दासों की रक्षा करने वाले शरणागति को प्राप्त हूं ।

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतंमम ॥

(प्रपन्नाय) यहाँ पंचम्यर्थ में चतुर्थी है (च) गुरुपरंपरा द्वारा मम व्रतम्=मेरी प्रतिज्ञा है ।

अर्थपंचक—

१– प्राप्य = श्री राम जी (परस्वरूप) ज्ञेय पदार्थ है

२– प्रापक = जीव (स्वस्वरूप) ३– प्राप्ति का उपाय = उपाय स्वरूप

४– प्राप्ति का फल = फल स्वरूप ५– प्राप्ति का विरोधी = विरोधी स्वरूप

बिरोधी स्वरूप = सांसारिक बिषयासक्ति ज्ञान का बिरोधी है।

१– स्वस्वरूप विरोधी—अनात्म वस्तु में आत्म बुद्धि रखना यह बाधक है अर्थात्—स्त्री पुत्रादि में मोह भगवान् को भूलना इत्यादि स्वस्वरूप ज्ञान में पूर्ण बाधक है।

२– पर स्वरूप विरोधी—वेद शास्त्र का वचन न मानना अपने उपास्य श्री राम जी को न मानना, पर स्वरूप ज्ञान का विरोधी है।

३– पुरुषार्थ विरोधी—श्रीराम को सर्वशक्तिमान् न मानना श्री राम को छोड़ कर किसी फल प्राप्त्यर्थ अन्य देवता की आराधना करना यह पुरुषार्थ फल विरोधी है।

४– उपाय विरोधी—वेद शास्त्र के कथनानुसार न चलना (कर्म ज्ञान भक्ति और प्रपत्ति) इनको छोड़ कर किसी अन्य को महत्व देना श्री राम जी को प्राप्त करने में असमर्थ प्रगट करना यह उपाय विरोधी है।

५– प्राप्ति विरोधी—भौतिक वस्तुओं पर विश्वास स्त्री पुत्रादि और अपने परिवार में स्नेह करना सन्त महात्माओं की उपेक्षा (तिरस्कार) करना यह प्राप्ति विरोधी है। भगवान् में अविश्वास श्रद्धाहीन व्यक्ति के साथ करना, भगवान् के मन्दिर में अमर्यादित काम करना यह प्राप्ति विरोधी है।

नमो नमो वाङ् मनसाति भूमये नमो नमो वाङ् मनसैक भूमये।
नमो नमोऽनन्त महाविभूतये नमो नमोऽनन्त दयैक सिन्धवे।
हरिः ॐ तत्सद् ब्रह्मणे नमः श्री सीताराम समर्पणमस्तु।

12443
अयोध्या
... राम दास छावनी ...

पुस्तक मिलने का पता—
मानस धार्मिक पुस्तक भण्डार
निकट—श्री मणिराम दास की छावनी अयोध्या।

अशुद्ध	अशुद्ध	लाइन	पृष्ठ
गुरुवे	गुरवे		१
जनर्दन	जनार्दन	१	२
स्परणीय	स्मरणीय	२	२
आरै	औरउ	१७	३
हृष, विसाद	हृष, विषाद	७	४
प्रकाश, प्रकाश	प्रकाशक, प्रकाशक	९, १०	४
अन्तरधान	अन्तर्धान	२२	४
दखहिँ	देखहिं	१८	५
अब	अत्र	६	८
प्रत्ययन्तर	प्रत्ययान्तर	१७	८
त्रिगुणात्मिकता	त्रिगुणात्मिका	६	९
मुणै	गुणैजगत्	१३	९
शृणगंत, श्री	शृणाति, श्रीः	१९, २०	९
चाखिले	चाखिलैर्नित्य	२६	९
भवत्यादि, निप्पन्त	भक्त्यादि–निष्पन्न	२७	१०
वाली, रूप	वाली, स्वरूप	१८	११

० भव, रुष, हहि, जना, ब्रह्म, सिद्धि, व्रह्म, देबता, वाह्य बाले समाया

० भये,रूप,होहिं,जाना,ब्रह्म,सिद्ध,ब्रह्म,देवता,ब्रह्म,वाले,समाता   १२

० पुस्तक, सेबवो, गौरब, स्विवशिव, सवाद, परमें पुरमें

० पुस्तक, उेवकों गौरव स्विवा शिव, सम्बाद, परम पुर   १३

प्रस घरिही, शु० प्रेस, घरिहीं   १, ११   १६

जगत पिता सुत करि जाना

जगत पिता मैं सुत करि जाना   २३   २८

पृत्र–पुत्र   १९   ३०

रनीयाँ–रानियाँ   १३   ३२

–○–

॥ श्रीः ॥

सीता राम सीता राम सीता राम कहिये ।
जाहि बिधि राखे राम ताहि विधि रहिये ॥१॥
मुख में हो राम नाम, राम सेवा हाथ मैं ।
तू अकेला नहि प्यारे, राम तेरे साथ में ॥२॥
विधि का विधान जान, हानि लाभ सहिये । जाहि० .... ॥३॥
किया अभिमान, तो फिर मान नहिं पायेगा ।
होगा प्यारे वहि जो राम जी को भायेगा ॥४॥
फल-आशा त्याग, शुभ काम करते रहिये । जाहि० .... ॥५॥
जिन्दगी की डोर, सौंप दीनानाथ के ।
महलों में रखे चाहे झोपड़ी में वास दे ॥६॥
धन्यवाद निर्बिवाद, राम राम कहिये । जाहि० .... ॥७॥
आशा एक राम जी से, दूजी आशा छोड़ दे ।
नाता एक राम जी से, दूजी नाता तोड़ दे ॥८॥
साधु सङ्ग राम रङ्ग, अङ्ग अङ्ग रङ्गिये ।
काम रस त्याग प्यारे, राम रस पगिये ॥९॥
सीता राम सीता राम सीता राम कहिये । जाहि० .... ॥१०॥

एक भरोसो एक बल। एक आस विश्वास ।
एक राम घनश्याम हित, चातक तुलसीदास ॥
राम भरोसो राम बल, राम नाम विश्वास ।
सुमिरि राम मंगल कुशल, माँगत तुलसीदास ॥
तब लगि कुशल न जीव कहँ, स्वपनेहुं मन विश्राम ।
जबलगि भजत न राम पद, शोकधाम तजि काम ॥
रसना साँपिनी वदन बिल, जो न जपहिं हरि नाम ।
तुलसी प्रेम न राम सों, ताहि विधाता वाम ॥
हिय फाटहु फूटहु नयन, जरहु ते तन केहि काम ।
द्रवहिं स्रवहिं पुलकहिं नहिं तुलसी सुमिरत राम ॥

वाल्मीकि प्रिंटिंग प्रेस, प्रमोदवन-अयोध्या ।